चन्दामामा
जुलाई १९८४
2
Rs

डायमंड कामिक्स प्रस्तुत करता है

६२ रंगीन पृष्ठों का हंसा-हंसा कर
लोटपोट कर देने वाला
कारटूनिस्ट प्राण का
अद्वितीय कॉमिक्स

बिल्लू की साफ्टी

1984 का सुपर मनोरंजन 5/-

बिल्लू की सोफ्टी को देखकर सबके मुंह की लार टपकने लगी, लेकिन यह सोफ्टी नौ वर्षीय नटखट से हथियाना टेढ़ी खीर थी. रुस्तम-ए-हिन्द बजरंगी पहलवान ने बिल्लू को छकाने का भरसक प्रयत्न किया, लेकिन इस कोशिश में वह अपनी हड्डी पसलियां तुड़वा बैठा. सिटी स्कूल के दो प्रिंसिपल, कौन असली कौन नकली ? क्रिकेट चैम्पियन्स की गेंद से कार और खिड़कियों के शीशे टूट गए. लेकिन मुहल्ले वालों ने खिलाड़ियों को तोहफे के रूप में एक अजीबोगरीब इनामी कप भेंट किया. ऐसा कप आपने आज तक नहीं देखा होगा. इनके अलावा एटम बम से भी ज्यादा विस्फोटक कैरेक्टर बिल्लू की अन्य कॉमिक्स.

बिल्लू का हंगामा	3-50	बिल्लू 2	3-50
बिल्लू 1	3-50	बिल्लू 3	3-50

अन्य नये डायमंड कामिक्स

मामा भांजा और ताऊजी की मूंछ 3/50

पलटू और गोलू पतीले 3/50

अंकुर और जहाज का अपहरण 3/50

फौलादी सिंह और चक्रव्यूह का मसीहा 3/50

5 छुट्टी विशेषांक

पलटू और शैतान की नानी 5/-

चाचा चौधरी अमरीका में 5/-

ताऊजी और पूंछ वाला दैत्य 5/-

मोटू पतलू और उड़न-तश्तरी 5/-

अंकुर और महाबली शाका 5/-

अपने निकट के बुक स्टाल से खरीदें या हमें लिखें।

डायमंड कामिक्स प्रा. लि. 2715 दरिया गंज, नई दिल्ली-110002

चन्दामामा

विषय-सूची

जुलाई १९८४

*

*

एक प्रतिः २-००

वार्षिक चन्दाः २४-००

चन्दामामा

संस्थापक: चक्रपाणि संचालक: नागिरेड्डी

प्यारे बच्चो !

इस महीने से 'चन्दामामा' तुम्हारे लिए एक उपहार ला रहा है — चार पृष्ठों का एक परिशिष्टांक !

इसमें हम एक **कथा-प्रतियोगिता** की घोषणा करने जा रहे हैं। अगले अंक से चुनी हुई श्रेष्ठ कहानियाँ इसके अन्तर्गत प्रकाशित की जायेंगी। तुम भी प्रयास करो।

एक स्तम्भ है — **जिज्ञासा**। इसके अन्तर्गत तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर दिये जायेंगे। अगले अंक से सर्वश्रेष्ठ प्रश्न के लिए पुरस्कार भी दिया जायेगा।

दूसरा स्तम्भ है तुम्हारी **'शब्द शक्ति'** बढ़ाने के लिए। एक महीने में यदि तुम इतने शब्दों को पचा सको तो वर्ष के अन्त में तुम्हारे ज्ञान कोश में कितने शब्द और बढ़ जायेंगे ? सोचो तो ज़रा।

एक स्तम्भ और है — **"हमारा महान देश ! हमारी महान संस्कृति !"** इसके अन्तर्गत अपने गौरवमय राष्ट्र और इसकी प्राचीनतम संस्कृति की एक झाँकी प्रस्तुत की जायेगी।

और, रहस्य, रोमांच तथा शिक्षा से भरपूर रोचक कथाओं का रंग-बिरंगा गुच्छा तो है ही पहले की तरह !

नया चन्दामामा कैसा लगा ? लिखना।

तुम्हारा **चन्दामामा** !

वर्ष: ३६ जुलाई १९८४ अंक: ११

एक प्रति: २-०० :: वार्षिक चन्दा: २४-००

चन्दामामा विशेष संवाद

नींद से जगाने वाली गोलियाँ

यह तो सर्व विदित है कि अनिद्रा से ग्रस्त लोगों के लिए नींद लाने की गोलियाँ सर्वत्र उपलब्ध हैं। लेकिन अब जर्मनी की एक अनुसन्धान प्रयोगशाला के अनुसार निश्चित समय पर जगाने की गोलियाँ भी मिलने लगी हैं।

सिहों का पहरा

इटली के नेपुलस नगर के समीप एक छोटे शहर में एक व्यापारी की दुकान पर दो सिंह शावक पहरेदारी पर तैनात रहते हैं।

उस व्यापारी ने उन सिंह-शावकों को एक सर्कस कम्पनी से खरीदा और बड़े प्यार से पाला। सिंह-शावक भी अपने मालिक तथा आस-पास के लोगों के साथ प्रेम पूर्ण व्यवहार करते हैं।

फिर भी पुलिस ने उस व्यापारी को यह आदेश दिया है कि उन सिंह-शावकों को वह चिड़िया घर को सौंप दे।

नया प्रतिमान

पश्चिम जर्मनी के हेसिलंजन नगर की आठ महिलाओं ने ढाई मीटर ऊँचे सलाख जैसे स्तम्भों पर १२२ घण्टे तक बैठ कर उस 'खेल' का नया प्रतिमान स्थापित किया है।

क्या आप जानते हैं ?

१. टेलिफ़ोन का आविष्कार किसने किया ?
२. टेलिस्कोप का निर्माण करने वाला वैज्ञानिक कौन था ?
३. ग्रामोफ़ोन का आविष्कार किसने किया ?
४. लाउड स्पीकर का आविष्कार किसने किया ?
५. स्टेथेस्कोप का आविष्कारक कौन था ?

(उत्तर पृष्ठ ६४ पर देखें।)

पहली परीक्षा

कोसल देश की राजधानी के समीप एक जंगल में विमलानन्द नाम के मुनि एक गुरुकुल के आचार्य थे। उन के यहाँ तर्क, मीमांसा, व्याकरण और इन्द्रजाल जैसे शास्त्रों के बड़े-बड़े पंडित रहा करते थे।

उस गुरुकुल में विद्याभ्यास करने के विचार से राजधानी से सुदास और मोहनदास नामक दो विद्यार्थी निकल पड़े। गुरुकुल में पहुँचकर दोनों ने मुनि विमलानन्द के दर्शन किये और उन्हें भक्ति पूर्वक प्रणाम करके अपने आगमन का कारण बताया।

विमलानन्द ने उनके ठहरने का प्रबन्ध कर दिया। फिर कहा— "सब से पहले मुझे इस बात की जानकारी प्राप्त करनी होगी कि तुम दोनों किस प्रकार की विद्या प्राप्त करने के योग्य हो। इस में थोड़ा समय लग सकता है। तब तक तुम दोनों गुरुकुल के नियमों का पालन करते हुए यहीं पर रह जाओ। मैं अपना निर्णय तुम लोगों को यथा शीघ्र सुनाने का प्रयत्न करूँगा।"

एक हफ़्ता बीत गया। एक दिन गुरुकुल के लिए आवश्यक जलावन जुटाने की जिम्मेदारी सुदास और मोहनदास पर आ पड़ी। वे दोनों दो कुल्हाड़ियाँ लेकर सूखे पेड़ों की खोज करते हुए जंगल में दूर तक निकल गये।

एक जगह उन्हें एक सूखे वृक्ष का ठूंठ दिखाई पड़ा। दोनों ने मिलकर उस ठूंठ को काट कर गिराया और उसके छोटे-छोटे टुकड़े करने लगे। उस वक्त उन्हें पेड़ के तने में स्वर्ण मुद्राओं की एक थैली दिखाई पड़ी। उसको देखते ही मोहनदास की आँखें चकाचौंध हो गईं। वह पल दो पल रुक कर बोला— "सुदास, आज से हमारी दरिद्रता दूर हो गयी। हम दोनों यह सोना आपस में बराबर-बराबर बांट लेंगे। अब घर और जमीन खरीद कर हम दोनों अपना सारा जीवन वैभवपूर्वक बिता

दिव्या अग्रवाल

सकते हैं। ऐसी हालत में हमें श्रम उठा कर विद्या प्राप्त करने की अब जरूरत नहीं है ! चाहे हम जो भी शिक्षा प्राप्त करें, उसका ध्येय धन कमा कर सुख पाना ही तो है। इसलिए हम यह धन ले कर अपने-अपने घर लौट जायें। हमें अब गुरुकुल में वापस जाने की जरूरत भी नहीं है ।"

सुदास उसकी बात से सहमत नहीं हुआ। उसने अनिच्छापूर्वक सर हिला कर कहा— "हम शिक्षा प्राप्त करने के लिए यहाँ पर आए हुए हैं। शिक्षा केवल धन-संपादन के लिए ही नहीं होती, वैसे धन कमाने के अनेक मार्ग हैं। धन के द्वारा हम विद्या अर्जन भी कर सकते हैं और विद्या के द्वारा हम भविष्य में धन का संपादन भी कर सकते हैं। याद रखो, जो धन हमें अनायास ही प्राप्त होता है वह उसी प्रकार खो भी जा सकता है। लेकिन हम जो विद्या प्राप्त करते हैं, वह हमें छोड़कर कभी नहीं जा सकती। इस के अतिरिक्त गुरुकुल के नियमों के अनुसार हमारा यह कर्तव्य है कि हमें यह सोना ले जाकर आचार्य के हाथ में इसी वक्त सौंप देना चाहिए ।"

पर मोहनदास को सुदास की यह सलाह बिल्कुल पसन्द न आई। उसने स्वर्ण मुद्राओं को गिनकर दो हिस्सों में कर दिया और एक हिस्सा सुदास के हाथ दे दिया। दूसरा हिस्सा अपने कुर्ते के अन्दर अच्छी तरह से छिपा कर बोला— "सुदास, मैं अब शिक्षा प्राप्त करना नहीं चाहता। मेरा लक्ष्य धनसंपादन करने का था; जो अनायास ही पूरा हो गया है। इसलिए अब मैं अपने घर लौट जाता हूँ। पर तुम चाहो तो गुरुकुल लौट कर अपनी पसंद की शिक्षा प्राप्त कर लो ।"

मोहनदास को रास्ते में एक छोटा-सा झरना पार करना पड़ा। उसमें उतर कर मोहन ने चार-पाँच क़दम ही आगे बढ़ाए थे कि उसके पैरों में कोई चीज़ लिपट गई और उसे लगा जैसे उस की एड़ी के पास सुई जैसी कोई चीज़ चुभ गई ।

मोहनदास भय कंपित हो पीछे की ओर घूम गया और उसने अपना पैर झाड़ दिया। उसके पैर में लिपटा हुआ एक लंबा साँप किनारे आ गिरा और समीप की झाड़ियों में सर्र-सर्र करता

हुआ रेंग गया ।

मोहन घबरा गया और उस ने किनारे पर आकर एड़ी के पास परख कर देखा। एड़ी के पास साँप के जबड़े धंस जाने के चिह्न साफ़ दिखाई दिये ।

सर्प दंश का अनुमान कर वह काँप उठा। उसे जान का भय सताने लगा । वह अपनी मदद के लिए चिल्लाते हुए झरने के किनारे दौड़ने लगा ।

मोहनदास जब थोड़ी दूर भाग कर पहुँचा, उसने देखा कि सामने से जंगल का एक निवासी उसी ओर चला आ रहा है । मोहन ने उस के समीप जाकर पूछा— "मुझ को साँप ने डँस लिया है । क्या तुम्हारे पास इस के लिए कोई दवा है ?"

जंगल के निवासी ने कहा— "सर्प दंश का इलाज करने की विद्या हमारे परिवार के लोग कई पीढ़ियों से सीखते आ रहे हैं। मैं दवा देकर तुम्हारे प्राण बचा सकता हूँ । लेकिन इस के बदले में तुम्हें अपने कुर्ते के अन्दर छिपा कर रखा हुआ सोना देना होगा ।"

मोहनदास को इस बात पर बड़ा आश्चर्य हुआ कि अपने कुर्ते में छिपाए सोना का पता जंगल के निवासी को कैसे लगा । तब तक मोहन के मुँह से झाग निकलने लगा । अमनी मृत्यु निकट समझकर उसने कोई प्रतिवाद किये बिना सारा सोना जंगल के निवासी के हाथ सौंप दिया ।

इसके बाद जंगल का निवासी वहाँ की झाड़ियों में चला गया। उसने कुछ पौधों के पत्ते

तोड़े और उन का रस निचोड़ कर मोहन की नाक और मुँह में डाल दिया। दूसरे ही क्षण विष के लक्षण एक दम गायब हो गए। जंगल का निवासी मन ही मन हँसते हुए वहाँ से जंगल की ओर चला गया।

मोहनदास के मन को सोना खो जाने की चिंता कुरेदने लगी। वह थोड़ी देर तक सोचता रहा, फिर अपने मन में यह निश्चय किया कि अब सारा सोना खो चुका हूँ। जीने का कोई सहारा नहीं है। इसलिए गुरुकुल में जाकर विद्याभ्यास कर लूँगा।

मोहनदास को देखते ही मुनि विमलानन्द ने कहा— "तुम दोनों की मैं ने गुप्त रूप से एक परीक्षा ली। उस में सुदास सफल रहा, इसलिए मैं ने उसे गुरुकुल में भर्ती कर लिया है। लेकिन तुम किसी भी प्रकार की शास्त्र विद्या प्राप्त करने के योग्य नहीं हो। क्यों कि तुमने गुरुकुल के नियमों का उल्लंघन किया है। ऐसे विद्यार्थियों को हमारे यहाँ स्थान नहीं है। इसलिए अपने घर लौट जाओ।"

मोहनदास निराश हो सर झुका कर वहाँ से चल पड़ा। गुरुकुल में एक वृक्ष के नीचे उसे उस का इलाज करने वाला जंगल का निवासी दिखाई दिया।

उसे गुरुकुल के पास देखकर मोहनदास के मन में संदेह हुआ। उस ने समीप में खड़े एक विद्यार्थी से पूछा— "भाई बताओ, जंगल का यह निवासी कौन है ?"

इस पर उसने उत्तर दिया— "ये महाशय, जंगल के निवासी नहीं, बल्कि जिज्ञासु विद्यार्थियों को इंद्रजाल की विद्या सिखाने वाले आचार्य हैं। आज उन्होंने जंगल के निवासी का वेश धारण कर लिया है।"

यह उत्तर सुनकर मोहनदास ने झुक कर अपने बायें पैर की एड़ी पर सांप के डँसने के चिह्नों को देखने का प्रयत्न किया, पर वहाँ पर उसे ऐसा कोई निशान दिखाई नहीं दिया। तब उसे यह समझने में देर नहीं लगी कि आचार्य ने उसकी कैसी परीक्षा ली। वह शर्मिन्दा हो वहाँ से अपने घर की ओर चल पड़ा।

१४

[महानाविक ने दुश्मन का सामना करने के लिए अपने गुलामों को मुक्त कर दिया। लेकिन उसकी यातनाओं से तंग आकर गुलामों ने पिंगल के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया और महानाविक को मार डाला। उसके बाद पिंगल ने दुश्मन के जहाज़ के साथ अपने जहाज़ को टकरा दिया। दो जहाज़ों के भयंकर टकराव से पिंगल उछल कर समुद्र में गिर पड़ा। इसके बाद आगे पढ़िये.....]

समुद्र में गिरते ही पिंगल एक बार डूब गया, फिर कुछ क्षणों के बाद वह पानी पर तिर आया। तब उसने चारों ओर अपनी दृष्टि दौड़ाई। उसने देखा कि दोनों नावें टूट गई हैं और उनके टुकड़े तथा पाल तितर-बितर हो सूखे पत्तों की भांति उड़ कर समुद्र पर बिखर गये हैं। और समुद्र में डूबने वाले नाविकों के हाहाकार से लहरें काँप उठी हैं। समुद्र का वह दृश्य अत्यन्त भयंकर लग रहा था। दो नावों के टूटने से उनके बिखरे हुए खण्ड समुद्र के बीच तिमिंगलों की भांति तैर रहे थे। असंख्य नाविक डूबते हुए अपने प्राणों की रक्षा के हेतु इस प्रकार चिल्ला रहे थे, मानो वे किसी खूंख्वार जानवर के मुँह में असहाय स्थिति में चले जा रहे हों। उस विनाश-लीला को देख कर पिंगल का मन दहल उठा।

समुद्र की उत्ताल तरंगों के बीच दम घुटने के कारण पिंगल छटपटा रहा था। समीप में

उसे कोई नाव भी नज़र नहीं आ रही थी। अपने बाहु बल पर विश्वास करके तैरने की उस की हिम्मत नहीं पड़ रही थी क्यों कि उसे दूर-दूर तक सिर्फ़ जल के अनन्त विस्तार के सिवा कुछ भी नहीं दीख रहा था। यह दुर्दशा न केवल उसकी ही थी बल्कि उस के शत्रु और मित्र दोनों ही इस संकट के शिकार हो गये थे। यह सोचकर उसे खुशी के साथ अपार दुख भी हुआ।

पिंगल की समझ में न आया कि अपनी जान बचाने के लिए अब उसे किस दिशा में तैरकर आगे बढ़ना है। तैर कर किनारे पहुँचने का प्रयत्न करना भी व्यर्थ होगा— पिंगल ने यह भी सोचा। समुद्र की लहरें उसे प्रति क्षण इधर उधर उठा कर फेंक रही थीं। मौत के मुँह में जाने वाला व्यक्ति जिस तरह अधीर हो कर भय के मारे कांप उठता है, वही हालत अब पिंगल की हो गई थी। धीरे-धीरे उसके बचने की आशा क्षीण हो रही थी। अब अंतिम सांस के रहने तक हाथ-पैर पटक कर बचने का प्रयत्न करने के सिवा उसके सामने कोई दूसरा उपाय न था।

एक घड़ी तक पिंगल लहरों के थपेड़ों के बीच फंस कर डूबते-तिरते संघर्ष करता रहा। उसने समझ लिया कि अब उसकी मौत निश्चित है। वह एक दम निराश हो गया। पर उसी वक्त कोई चीज़ उस के हाथ से टकरा गई। इस पर पिंगल ने चट से उस चीज़ को अपने हाथों से कस कर पकड़ लिया।

तभी पिंगल को अपनी मां की बात याद आ गई कि क़िस्मत सदा उसके साथ रहेगी। इस विश्वास के बावजूद पिंगल अत्यन्त निराश हो चुका था। उसकी सब से बड़ी चिंता इस बात की थी कि उसकी अनुपस्थिति में उसकी वृद्ध माता की देखभाल कौन करेगा। वैसे वह अपनी माँ के हाथ काफी सम्पत्ति छोड़ आया था और उसे एक अद्भुत थैली भी सौंप आया था, जिस की वजह से उस की मां के सामने खाने-पीने की समस्या तो नहीं रहेगी, पर उसे उसके भाइयों पर भरोसा न था। इस बात के स्मरण मात्र से पिंगल का दिल दहल उठा। फिर भी उस का दिल कह रहा था कि वह किसी न

किसी दिन समुद्र के जल से पार लगेगा ।

पिंगल के हाथ में जो चीज़ आई थी, वह नाव के टूटने से छितर गया लकड़ी का एक तख्ता थी। इस प्रकार पिंगल को खतरे की उस हालत में 'डूबते को तिनके का एक सहारा' मिल गया। उसने मन ही मन भगवान के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। तब उस तख्ते को अपने दोनों हाथों के बीच खींच लाकर उस पर औंधे मुँह लेट गया। उसके मन में यह आशा बंध गई कि तूफान और समुद्र की लहरें कभी किसी दिन उस को समुद्र के किनारे लगा देंगी। प्राणों के भय से वह अपनी असहनीय भूख और सर्दी की चिंता भी भूल गया था ।

लकड़ी का तख्ता पानी की लहरों के साथ डूबते-तिरते हुए बहता जा रहा था। पिंगल उसे कस कर पकड़े हुए था, ताकि वह कहीं गलती से उस की पकड़ से खिसककर बह न जाए। उसने डर के मारे इस बात की कोशिश तक नहीं की कि उसके चारों तरफ़ क्या हो रहा है।

कुछ घंटे बीत गए। समुद्र के उस पार सूर्य अस्त हो गया था। चारों तरफ़ अंधेरा धीरे-धीरे उतर रहा था। लेकिन पिंगल को यह सब जैसे पता ही नहीं चला। समुद्र के भयंकर घोष और सर्दी के मारे ठिठुरने के अतिरिक्त उसे किसी और बात का आभास तक नहीं हो रहा था। थोड़ी देर बाद प्यास के मारे उसकी जीभ सूखने लगी। अनायास ही पिंगल ने समुद्र का थोड़ा सा जल पी लिया। इससे पेट के अन्दर मचलाहट पैदा होने लगी और वह तख्ते पर ऐंठने लगा। कुछ देर के बाद जब उसकी पीड़ा कम हुई तो असहनीय भूख, समुद्र की भयंकर गर्जन और अपने प्राणों के भय के बावजूद वह गहरी नींद में डूब गया, क्यों कि वह थक कर शिथिल हो चुका था ।

जब उसकी आँखें खुलीं, तब उसने देखा, चारों तरफ़ निर्मल नीलाकाश फैला हुआ है। किन्तु उस के शरीर का ऊपरी भाग इस प्रकार जल रहा था मानो चूल्हे पर सेंका जा रहा हो। और पैर सर्दी की वजह से काष्ठवत होते जा रहे थे ।

यह हालत पिंगल को बड़ी अजीब सी लगी। वह यह जानने की कोशिश करने लगा

कि इस वक्त वह कहाँ पर है। उसने उस कमजोरी की हालत में भी सर घुमा कर देखा। उसके आश्चर्य का कोई ठिकाना न था। जहाँ तक उसकी दृष्टि गई, दूर तक रेगिस्तान फैला हुआ था। पिंगल चौंक पड़ा। उसे लगा उसके शरीर के अन्दर भारी ताक़त आ गई है। उसने अपनी कोहनियों को पृथ्वी पर टिका कर उठने की कोशिश की। उस के दोनों पैर पानी में भीग रहे थे। सामने महा समुद्र शांत एवं निर्मल सरोवर जैसा लहरा रहा था।

पिंगल को यह भांपने में देर न लगी कि वह किस प्रकार के स्थान पर पहुँच गया है। एक ओर महा सागर और दूसरी तरफ़ विशाल रेगिस्तान !

पिंगल ने लड़खड़ाते हुए दो क़दम आगे बढ़ाए। सूर्य की किरणों से बचने के लिए अपनी आँखों पर हाथ रख कर दूर तक दृष्टि दौड़ाई। थोड़ी दूर पर आसमान में उड़ते हुए कुछ गीध दिखाई दिए। वे सब किसी खास दिशा में उड़ नहीं रहे थे, बल्कि गोलाकृति में एक ही स्थान पर उड़ते हुए धीरे-धीरे नीचे उतर रहे थे।

पिंगल के मन में थोड़ी आशा का उदय हुआ। उसने सोचा कि जहाँ पर गीध उड़ रहे हैं, वहाँ कोई सरोवर या गाँव अवश्य होगा। इस विचार के आते ही उस के अन्दर आपार ताक़त उमड़ पड़ी। वह अपनी दृष्टि उसी दिशा की ओर केन्द्रित करके तपती हुई रेत पर सब्रता पूर्वक चलने लगा।

थोड़ी देर में पिंगल उस स्थान पर पहुँचा जिसके आस-पास गीध उड़ रहे थे। वे सारे गीध वहाँ पर किसी चीज़ को घेर रहे थे। उस दृश्य को देखकर पिंगल का कलेजा एक दम दहल उठा।

एक आदमी एक चट्टान से टिका कर खड़ा कर दिया गया था और उसके हाथ-पैर रस्से से बाँध दिये गये थे। ऐसा लग रहा था उस आदमी के भीतर कोई चेतना नहीं है। गीध उस को नोच-नोच कर खाने के लिए उस के चारों तरफ फैल रहे थे।

पिंगल ने पल भर उस अभागे की ओर देखा। फिर झट झुक कर पत्थर का एक छोटा

सा टुकड़ा उठा कर गीधों की ओर फेंक दिया। कुछ गीध पंख फड़ा-फड़ाकर आसमान में उड़ गए। कुछ और गीध थोड़ी दूर उछल कर अपने आहार की ओर ताकने लगे ।

पिंगल अब उस आदमी के समीप पहुँचा। उसकी आँखें बन्द थीं । उस की चेतना को भांपने के लिए पिंगल ने उसके वक्ष पर हाथ रख कर देखा। वह निस्पन्द और निष्प्राण हो गया था ।

पिंगल कल्पना तक न कर सका कि इस मरुभूमि में कौन किस कारण से उस आदमी को ऐसी भयंकर और क्रूर मौत दे सकता है । अचानक उसके दिमाग में कोई नयी बात सूझ गई। उसे लगा, भयंकर लगने वाले इस निर्जन प्रदेश में कहीं कुछ लोगों का निवास जरूर होगा ।

अब उसका कर्तव्य क्या है, पिंगल सोचने लगा। सबसे पहले उसे अपनी प्यास बुझाने के लिए पानी चाहिए। इसके बाद उसे खाना कहाँ पर मिलेगा ? पानी और खाना के अभाव में वह ज़्यादा दिन बच न सकेगा। यदि वह बेहोश हो गया तो कोई जल-जन्तु उस पर आक्रमण करके उसे निगल सकता है । इसलिए उन से आत्म-रक्षा करने केलिए भी तो उसे ताकत की जरूरत है। ताक़त तो देह में तभी आ सकती है, जब वह अपनी भूख-प्यास मिटा कर अपने अन्दर ताक़त पैदा कर ले। आख़िर उसे इस

महा सागर में खाना-पानी कहां से प्राप्त होगा ? ये ही सब उसके सामने समस्याएँ थीं पर इन समस्याओं का हल कैसे किया जाये ।

पिंगल जब इन्हीं समस्याओं में उलझा हुआ था, तब कुछ दूरी पर रेगिस्तान में चक्कर काटने वाले ऊंटों के दल के नेता ने अपनी दूरबीन से पिंगल और उस मृत व्यक्ति को ही नहीं, बल्कि वहाँ पर गोलाकृति में उड़ने वाले गीधों के समूह को भी देखा। दूसरे ही पल उसका आदेश पाकर ऊँटों का दल तेज गति से उसी ओर दौड़ कर आने लगा। ऊटों की तेज गति से रेत की धूल उड़ने लगी ।

दूर रेगिस्तान में धूल उड़ते देख पहले पिंगल को आश्चर्य हुआ, पर ऊंटों के दल को आते

देख धूल उड़ने का कारण उस की समझ में आ गया। उसे देखकर उस के मन में उत्साह के साथ भय भी पैदा हो गया। उसे इस बात का डर हुआ कि वह दल यदि रेगिस्तान के लुटेरों का हुआ तो कुछ ही क्षणों में उस की मौत निश्चित है। मगर भाग कर कहीं छिप जाने के लिए वहाँ पर न कोई गुप्त प्रदेश ही था और न इस के लिए आवश्यक ताक़त ही उसके शरीर के भीतर शेष रह गई थी। वास्तव में वह उस वक्त एक भी क़दम चलने की हालत में न था।

ऊँटों का दल अब उसके समीप आ गया था। अपने नेता का आदेश पाते ही उस दल के सब लोगों ने अपने ऊंटों से उतर कर पिंगल को घेर लिया। चकित हो मौन खड़े हुए पिंगल की ओर ऊंट-दल के नेता ने आपाद मस्तक परख कर देखा और पूछा— "तुम मरुदस्यु भैरव के अनुचर तो नहीं हो ?" फिर मृत व्यक्ति के समीप झुक कर उस को परख कर देखा, तब अपने अनुचरों की ओर मुड़ कर बोला— "यह मृत व्यक्ति हमारे ही दल का है। हमारे क़िले पर पहरा देने वाले और लोग कहाँ हैं ? कहीं हमारा क़िला भैरव के अधीन तो नहीं हो गया ?"

इसी बीच ऊँट दल के एक सिपाही ने अपने भाले को पिंगल की पीठ कर टिका कर गरज कर पूछा— "सच सच बताओ, तुम्हारे नेता भैरवनाथ कहाँ है ?"

यह सवाल पिंगल की समझ में कुछ भी नहीं आया। शायद भैरवनाथ कहलाने वाला व्यक्ति लुटेरों के दल का कोई नेता होगा। तब तो फिर ये लोग कौन हैं ? उसने सोचा।

पिंगल ने कहा— "मैं किसी का अनुचर नहीं हूँ। क़िस्मत का मारा हुआ हूँ। इस महा समुद्र में हमारी नाव तूफान में फंस कर टूट गई। भगवान की कृपा से प्राणों के साथ मैं इस किनारे आ लगा हूँ। यहाँ पर इस मृत व्यक्ति को जीवित मान कर इसे गीधों से बचाने के लिए आया हूँ। मैं यह भी नहीं जानता कि यह देश कौन सा है और इस रेगिस्तान का नाम क्या है।"

इस पर ऊँट-दल के नेता ने फिर एक बार

पिंगल को परख कर देखा और चेतावनी देते हुए कहा— "यदि तुम्हारी बातें सच हैं तो तुम्हें घबराने की कोई जरूरत नहीं है। अगर झूठ हैं तो तुम्हारे शरीर के टुकड़े-टुकड़े करके इन गीधों का आहार बना दूँगा। इस वक्त तुम जहाँ हो, यह अफ्रीका के समुद्री तट पर स्थित अरब देश का प्रदेश है। मैं नवाब साहब के ऊंटों के दल का नेता हूँ। अब तुम निर्भय होकर सारा समाचार सच-सच बतला दो-तुम्हारी नाव कैसे टूट गई और तुम इस किनारे कैसे लग गए ?"

पिंगल को यह जान कर खुशी हुई कि वे लोग डाकू नहीं, बल्कि अरब देश के नवाब के सैनिक हैं, देश के नवाब और ऊंट दल के ये नेता-किसी भी प्रकार के स्वभाव के क्यों न हो, फिलहाल उसे प्राणों के लिए कोई खतरा नहीं था। इसलिए उसने अपने मन में सोचा कि अपनी पुरानी कहानी को छोड़ कर जब से गुलाम बना है, तब से सारा वृतांत उसे सुनाया जा सकता है।

इसी विचार के अनुसार पिंगल ने अपनी नाव के नाविक तथा महा सागर में उस नाव पर आक्रमण करने वाली नाव की लड़ाई के बारे में विस्तार पूर्वक आदि से अन्त तक सारा वृतांत सुना दिया।

सारा समाचार सुनकर ऊंट दल का नेता, संतुष्ट हो कर हँस पड़ा, फिर पूछा— "तब तो इस बात में कोई संदेह नहीं है कि जिस नाव ने तुम्हारी नाव पर हमला बोल दिया था, उस में भी गुलाम थे।"

"जी हाँ, इस में कोई संदेह की बात नहीं है। मैंने उस नाव के नाविक के साथ समझौता करने का प्रयत्न किया लेकिन उसने जो उत्तर दिया, उससे मैं ने यही अनुमान लगाया कि वह भी गुलामों के क्रय-विक्रय का व्यापारी है। इसीलिए वह मेरे साथ समझौता करने केलिए तैयार न था।" पिंगल ने जवाब दिया।

ऊंट दल के नेता ने स्वीकृति सूचक सर हिला कर कहा— "मेरा नाम हसन गोरी है। तुमने भी अनेक लोगों का नेतृत्व किया है, इसलिए तुम मेरी बराबरी के हो। अतः तुम मुझ को मेरे नाम से ही पुकार सकते हो। हम लोग

भैरवनाथ नामक एक रेगिस्तानी डाकू का अंत करने के लिए इस मरुभूमि में गश्ती लगा रहे हैं। हाथ-पैर बांध कर मार डाला गया यह व्यक्ति भी हमारे ही दल का था। वह इस मरुभूमि में स्थित एक क़िला की रक्षा करने के लिए तैनात हुए सिपाहियों में से एक था। पर मुझे समझ में नहीं आ रहा है कि भैरवनाथ इसे कैसे बन्दी बना पाया। मुझ डर है कि कहीं क़िला दुर्भाग्य वश भैरवनाथ के अधीन तो नहीं चला गया है ?'' यों कहकर उसने सैनिकों की ओर मुड़ कर फिर कहा— "इस क्षण से तुम लोग इस अजनबी को भी हमारे दल का एक सैनिक मान लो। बेचारा यह भूख-प्यास से तड़प रहा है। इसे तुरन्त भोजन और पानी देने का इन्तजाम करो।''

हसन गोरी के मुँह से ये शब्द सुन कर पिंगल की जान में जान आई। सैनिकों से प्राप्त रोटियाँ खाकर पिंगल ने पानी पिया। दूसरे ही क्षण हसन गोरी ने पिंगल को एक ऊंट दिखाकर कहा— "सुनो, इस वक्त से यह ऊंट तुम्हारा वाहन है। हम लोग अभी यहाँ से रवाना हो रहे हैं। मेरा अनुमान है कि इफी क़िले पर भैरव ने अधिकार कर लिया है।''

यों कह कर वह एक सैनिक की ओर मुड़ा और उसे आदेश दिया— "इस लाश को एक ऊंट पर लाद लो। हम इफी क़िले के पास इस की समाधि बनाएंगे। इस को इन गीधों का आहार बनाना पाप है।''

इस के बाद थोड़ी ही देर में ऊंट का वह दल वहाँ से चल पड़ा। रेगिस्तान में उठने वाले रेत के तूफानों के बीच यात्रा करते हुए सूर्यास्त के समय तक वह दल इफी क़िले के समीप पहुँचा। क़िले के आसपास का वातावरण एक दम शांत और निर्जन था। उसे आश्चर्य हुआ कि सदा जिस क़िले के पास चहल-पहल रहा करती थी, वहाँ पर आज यह डरावने सुनसान का वातावरण कैसा ?

हसन गोरी ने पिंगल की ओर मुड़ कर आश्चर्य के साथ अपनी भृकुटियाँ चढ़ा कर क़िले की ओर हाथ हिलाया। (क्रमशः)

कनक सुन्दरी की कहानी

धुन के पक्के विक्रम ने आधी रात में भयंकर आंधी और वर्षा की परवाह किये बिना वृक्ष पर से शव उतार कर कंधे पर डाल लिया और चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़े। तब शव में स्थित बेताल ने पूछा— "राजन, इस अर्द्ध रात्रि के समय आप यह जो अथक श्रम उठा रहे हैं, इसे देख मेरे मन में यह शंका पैदा होती है कि आप यह सारा प्रयास धर्म बुद्धि से प्रेरित होकर दूसरों का उपकार करने के लिए नहीं, बल्कि अपने स्वार्थ के लिए ही कर रहे हैं। ऐसा करने वाले कुछ लोग प्रतिकूल परिस्थितियाँ पाकर प्राणों के भय से अपनी लगन को त्याग देते हैं और ऐसे लोगों के अधीन हो जाते हैं, जिन के प्रति वास्तव में वे द्वेष भाव रखते हैं। मुझे भय है कि आपके साथ भी कहीं ऐसा ही न हो। आपके मार्ग के श्रम को भुलाने के लिए उदाहरण के रूप में मैं आपको कनक सुन्दरी नामक एक राजकुमारी की कहानी सुनाता हूँ।

बेताल कथा

ध्यान से सुनिये ।"

यों कह कर बेताल कहानी सुनाने लगा: एक समय जसवंत राज्य पर राजा कुलदीप राज्य करते थे। उनके राज्य में प्रजा सुखी थी। उनके यहाँ सुकीर्ति नामक एक योग्य मंत्री थे। वे राजा कुलदीप को उनके राज-काज में उचित सलाह दिया करते थे। मंत्री की योग्यता और बुद्धि पर राजा को पूरा भरोसा था। इसलिए राजा उन सलाहों पर पूर्ण रूप से अमल करते थे। इस प्रकार कई वर्ष बीत गए।

राजा कुलदीप अब वृद्ध हो चुके थे। बुढ़ापे में वे एक भयंकर व्याधि के शिकार हो गये। उन्हों ने समझा कि उनकी मृत्यु अब निकट आ गई है और वे अब अधिक दिन जीवित नहीं रह पायेंगे। इसलिए उन्होंने अपने पुत्र मणिदीप का राज्याभिषेक कर दिया। इसके बाद उन्होंने अपने पुत्र को समझाया— "बेटा, तुम हमारे मंत्री की सलाह लिए बिना कोई निर्णय न करना। राज-काज में वे मुझ से भी कहीं अधिक अनुभव रखते हैं। वे जिस काम को करने से मना करेंगे, वह काम कभी मत करना।"

यों समझा कर राजा ने सदा के लिए अपनी आँखे मूँद लीं।

मणिदीप ने जैसा अपने पिता को वचन दिया था, उसके अनुसार उसने वृद्ध सुकीर्ति को ही अपना मंत्री नियुक्त कर लिया।

एक बार मणिदीप ने सुकीर्ति को अपने पड़ोसी राजा जयपाल का समाचार सुनाकर कहा— "मेरा विश्वास है कि जयपाल धीरे-धीरे शक्तिशाली बनता जा रहा है। इसलिए मैं उस पर चढ़ाई करना चाहता हूँ। इस संबन्ध में आप का क्या विचार है ?"

सुकीर्ति थोड़ी देर सोच कर बोले— "महाराज, आप कृपया अपना यह विचार त्याग दीजिए।"

यह उत्तर सुन कर मणिदीप को आश्चर्य हुआ। उन्हें आशा थी कि वे अवश्य मेरे विचार से सहमत होंगे। उन्होंने पूछा— "क्या मैं इस का कारण जान सकता हूँ ?"

"आप यह युद्ध अपने राज्य का विस्तार करने की कामना से ही करना चाहते हैं न ? यदि आप का यह प्रयत्न सफल न हुआ तो

हमारी अधिकांश सेनाएँ नष्ट हो जायेंगी। ऐसी हालत में यदि कोई दूसरा राजा हम पर हमला कर दे तो हमारे राज्य के लिए खतरा पैदा हो सकता है।" सकीर्ति ने कहा।

सुकीर्ति की यह सलाह मणिदीप को अच्छी न लगी। फिर भी मंत्री को अनुभवी मानकर तथा अपने पिता के आदेश का स्मरण करके मणिदीप ने अनिच्छा से ही युद्ध के प्रयत्न को त्याग दिया।

इस के एक सप्ताह बाद मणिदीप जंगल में शिकार खेलने को रवाना हुआ। उस समय मंत्री सुकीर्ति ने उस को रोक कर कहा— "महाराज, आज का दिन शिकार खेलने योग्य नहीं है। आप दो दिन रुककर जाइएगा।"

मणिदीप का सारा उत्साह ठण्डा पड़ गया। उस ने मंत्री से पूछा— "आप ने इस का कारण नहीं बताया।"

"चार-पाँच घंटों के अन्दर पानी बरसने की संभावना है। जंगल में पानी से बचने के लिए कहीं आश्रय नहीं मिलता, साथ ही बरसात का मौसम शिकार खेलने के लिए अनुकूल नहीं होता।" सुकीर्ति ने कहा।

मणिदीप ने इस बार भी मंत्री की सलाह मान कर अनिच्छापूर्वक, शिकार पर जाने का निश्चय छोड़ दिया। लेकिन चार घंटों के बाद भी पानी नहीं बरसा। आसमान में जहाँ-तहाँ बादल घुमड़ते अवश्य दिखाई दिए।

इस पर मणिदीप ने मंत्री सुकीर्ति को बुलवा कर पूछा— "आप ने मुझ को शिकार खेलने के लिए जाने से रोक दिया, लेकिन अभी तक पानी नहीं बरसा।"

सुकीर्ति मंद हास करके बोले— "हो सकता है कि राजधानी में पानी न बरसा हो, पर मेरे अन्दाज के अनुसार जंगल में भारी वर्षा होनी चाहिए। मैं बादलों की गति-विधि की अच्छी जानकारी रखता हूँ।"

मंत्री के मुँह से ये बातें सुनकर राजा मणिदीप ने अपनी शंका का निवारण करने के लिए कुछ सिपाहियों को जंगल में भेजा। सिपाहियों ने लौट कर समाचार दिया कि सारे जंगल में भारी वर्षा हुई है और पहाड़ी नालों और नदियों में बाढ़ आ गई है।

दो महीने बीत गए। मंत्री सुकीर्ति ने राजा

मणिदीप के दर्शन करके कहा— "महाराज, भेदियों के द्वारा पता चला है कि हमारे पड़ोसी राजा जयपाल हमारे देश पर हमला करने की तैयारी कर रहे हैं ।"

मणिदीप ने रूखे स्वर में कहा— "ओह, ऐसी बात है । कुछ दिन पूर्व मैं ने जयपाल पर आक्रमण करना चाहा, पर उस समय आपने मुझे मना किया । इस वक्त वही हम पर हमला करने जा रहा है । उस का सामना करने पर भी सैनिकों की हानि हो सकती है न ?"

मंत्री सुकीर्ति ने शांत स्वर में कहा— "आप का कहना बिल्कुल सच है । हम किसी पर हमला करें या हमें शत्रु का सामना करना पड़े, दोनों स्थितियों में कुछ हद तक सेना और प्रजा की हानि अवश्य होती है ।"

इस पर मणिदीप ने मंत्री की ओर व्यंग्यात्मक दृष्टि दौड़ा कर पूछा— "तब तो आप मुझे यह सलाह देना चाहेंगे कि मैं जयपाल के साथ युद्ध किये बिना ही उसकी अधीनता को स्वीकार कर लूँ और उसका सामंत बन जाऊँ ?"

"ऐसी कोई जरूरत नहीं है । सैनिक बल की दृष्टि से जयपाल हम से किसी बात में कम नहीं है । ऐसे व्यक्ति के साथ शत्रुता के बदले रिश्ता जोड़ना ही ज़्यादा उचित होगा । उन के यहाँ विवाह करने योग्य एक कन्या है । यदि आप उसके साथ विवाह कर लें तो हमारा ही हाथ ऊँचा रहेगा ।" सुकीर्ति ने सलाह दी ।

मणिदीप ने सुन रखा था कि जयपाल की पुत्री कनक सुन्दरी अनुपम रूपवती है । और उसके मन में यह कामना भी थी कि संभव हो तो उसके साथ विवाह करना चाहिए । इन कारणों से मणिदीप ने मंत्री सुकीर्ति के सुझाव को मान लिया ।

सुकीर्ति के द्वारा संदेशा पाकर जयपाल बहुत प्रसन्न हुए । अपनी पुत्री को बुला कर सारा समाचार उसे सुनाया और इस विवाह के सम्बन्ध में उसकी राय मांगी । राजकुमारी कनक सुन्दरी ने पल भर सोच कर कहा— "पिताजी, आपने जसवन्त राज्य पर हमला करना चाहा, ऐसी हालत में विवाह का यह प्रस्ताव किस प्रकार आया ?"

"बेटी, मेरे मन में यह आशंका है कि युवक राजा मणिदीप राज्य-विस्तार की कामना से कभी

न कभी हमारे राज्य पर हमला कर बैठेगा। इसलिए इसके पूर्व ही मैं ने उसके राज्य पर हमला करना चाहा। पर यह समाचार जान कर मुझे प्रसन्नता हो रही है कि वही स्वयं हमारा दामाद बनना चाहता है।" राजा ने कहा।

"आपने जसवन्त राज्य पर हमला करने का निश्चय किया, इसके बाद ही हमारे साथ रिश्ता जोड़ने का यह प्रस्ताव आया है। कहीं इसके पीछे कोई षड़यंत्र तो नहीं है?" कनक सुन्दरी ने शंका प्रकट की।

जयपाल थोड़ी देर तक सोचते हुए मौन रहे, फिर बोले— "जसवन्त राज्य के मंत्री सुकीर्ति बड़े अनुभवी हैं। राज-तंत्र में निपुण हैं। संभवतः इस प्रस्ताव के पीछे उन की सलाह होगी।"

कनक सुन्दरी ने स्वीकृति सूचक सर हिला कर कहा— "मैं ने यहाँ तक सुना है कि जसवन्त देश के राजा अपने मंत्री सुकीर्ति की अनुमति लिये बिना शिकार खेलने तक नहीं जाते। सारे काम जो राजा अपने मंत्री की सलाह पर करते हैं, भविष्य में उन्हीं की सलाह पाकर मुझको त्याग भी सकते हैं। इसलिए आप कृपया यह उत्तर भेजिए कि जसवन्त के राजा यदि वहाँ के मंत्री को देश निकाला का दण्ड दें तभी मैं उन के साथ विवाह कर सकती हूँ।"

राजा जयपाल ने राजा मणिदीप को यही सन्देश भेजवा दिया। यह खबर पाकर मणिदीप का खून खौल उठा। उसने गरज कर कहा— "जयपाल का ऐसा घमण्ड!"

पर सुकीर्ति ने शांत स्वर में समझाया— "महाराज, मैं आप के पूर्वजों के देश प्रसेन राज्य में जाकर अपना शेष जीवन बिताऊँगा। आप मुझे अनुमति दीजिए।"

इस पर मणिदीप ने दृढ़ स्वर में उत्तर दिया— "आप को मंत्री के रूप में हमेशा हमारे साथ रहना होगा। इस सम्बन्ध में मैं आप की सलाह का पालन नहीं करना चाहता।"

इसके एक सप्ताह बाद मणिदीप ने जयपाल के राज्य पर हमला कर दिया। जयपाल ने पूरी तैयारी के साथ सामना किये बिना उसके साथ समझौता कर लिया। इसके बाद कनक सुन्दरी ने मणिदीप के साथ विवाह कर लिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर विक्रम को सावधान कर दिया— "राजन, क्या कनक

सुन्दरी का व्यवहार अनुचित प्रतीत नहीं होता ? उस ने अपना निर्णय क्यों बदल डाला ? उसने कहला भेजा था कि मंत्री सुकीर्ति को देश निकाला दण्ड देने पर ही वह जसवन्त देश के राजा मणिदीप के साथ विवाह कर सकती है। जब उस का पिता शत्रु का सामना न कर सका, तब उसने जसवन्त राजा के साथ विवाह करने की सम्मति क्यों दी ? इस का कारण यही था न कि वह कष्टों के बवण्डर में फंस जाएगी ? इस सन्देह का समाधान आप जान कर भी न देंगे तो आप का सर फट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा ।"

इसके उत्तर में विक्रम ने कहा— "कनक सुन्दरी के व्यवहार में कोई अनुचित बात प्रतीत नहीं होती । वह पहले ही जानती थी कि जसवन्त देश का राजा मणिदीप अपने पिता को दिये वचन के अनुसार अपने मंत्री की सलाह लिये बिना कोई निर्णय न लेगा । सदा-सर्वदा हू-ब-हू मंत्री की सलाहों का पालन करने वाला राजा-चाहे इसके पीछे किसी प्रकार का कारण क्यों न हो ? एक प्रकार से अस्वतंत्र है। ऐसा व्यक्ति शनै-शनै अपने सोचने व विचारने की शक्ति खो बैठता है और किसी के हाथ का खिलौना बन जाता है। मणिदीप के अन्दर स्वयं सोच-समझकर निर्णय लेने की शक्ति है या नहीं, इस की परीक्षा लेने के लिए ही कनक सुन्दरी ने मंत्री को देश निकाला की सजा देने की शर्त रखी थी, पर इस मामले में मणिदीप ने मंत्री की सलाह का पालन किये बिना जयपाल के राज्य पर हमला कर दिया। इससे यह साबित हुआ कि मणिदीप के अन्दर ऐसी शक्ति और क्षमता भी है कि उसको जो सलाहें उचित नहीं लगतीं उन का वह तिरस्कार कर सकता है और स्वयं सोच-विचार कर निर्णय लेने की क्षमता भी रखता है। उसकी दृष्टि में मणिदीप योग्य साबित हुआ । इसी कारण से उसने मणिदीप के साथ विवाह कर लिया ।"

इस प्रकार राजा का मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः पेड़ पर जा बैठा ।

होड़

गणेश त्रिपाठी किसी काम से पड़ोसी गांव में जा रहे थे। उस समय रसोई घर में उसकी पत्नी कुछ काम में जुटी हुई थी। जाते समय उसने पत्नी को बुला कर कहा— "सुनो, रात को देर होने पर न लौट सकूँ तो मैं सवेरे तक जरूर घर लौट आऊँगा।"

गणेश की पत्नी अच्छी तरह जानती थी कि उस का पति अंधेरे को देखते ही डर जाता है। इसलिए इस बात की याद दिला कर बोली— "तुम तो रात के समय यात्रा करने से डरते हो, इसलिए अन्धेरे में कैसे घर लौट सकते हो ?"

यह जवाब सुनकर गणेश त्रिपाठी खीझ कर बोला— "मैं कुछ भी कह दूँ तो उसमें कुछ नुक़्ता चीनी करना तुम्हारी आदत सी हो गई है। देखती रहो, मैं सवेरे तक निश्चय ही लौट आऊँगा।"

"लौटने पर देखूँगी। तुम्हारी होड़ और लगन कहाँ तक सच साबित हो सकती है ?" पत्नी मुस्कुराते हुए बोली।

पति-पत्नी का इस प्रकार वाद-विवाद करना उस परिवार में एक मामूली बात हो गई थी। पर हर बार पत्नी की बात का सच हो जाना गणेश त्रिपाठी के लिए आक्रोश का कारण बन जाता था। घर से निकलते वक्त ही गणेश त्रिपाठी ने इस बार निश्चय कर लिया कि चाहे जो हो, सवेरे तक जरूर घर लौट आना है।

लेकिन वह गांव की सीमा भी पार नहीं कर पाया था कि तभी पड़ोसी गाँव से एक आदमी आ निकला। गणेश त्रिपाठी ने उस को पहचान लिया और पूछा— "अरे जगन्नाथ, क्या तुम मुझसे ही मिलने आ रहे हो ?"

"हाँ,, बाबूजी। छोटे पंडित जी किसी जरूरी काम से राजधानी में चले गए हैं , आप को एक पखवारे के बाद मिलने को कहा है।" जगन्नाथ ने जवाब दिया।

गणेश त्रिपाठी ने कहा— "अच्छी बात

है।'' यह कह कर वह वापस अपने गाँव पहुँचा और सीधे अपने मित्र गोविन्द के घर जाकर यह समाचार सुनाया ।

''तब तो अब क्या किया जाये, तुम चुपचाप अपने घर चले जाओ।'' गोविन्द ने सुझाया।

''नहीं, आज रात को मैं गुप्त रूप से तुम्हारे घर पर-ही रहूँगा। और कल सवेरे तड़के निकल कर मैं अपने घर जाऊँगा। इस बार मैं ने अपनी पत्नी से जो होड़ लगाई है उसमें सफलता प्राप्त करनी है।'' गणेश त्रिपाठी ने अपना निर्णय सुनाया ।

गोविन्द ने उस की बात मान ली ।

गणेश त्रिपाठी ने सारी रात गोविन्द के घर में बिताई। गोविन्द की पत्नी अपने मायके गई हुई थी। इस कारण से गोविन्द ने अपने दो मित्रों को अपने घर बुलवा लिया। चारों आदमी रात भर जुआ खेलते रहे । सवेरा होते-होते सभी लोगों की आँखें लग गईं। जब वे लोग जागे तो सूरज सर पर आ गया था और कड़ी धूप पड़ रही थी ।

गोविन्द ने गणेश त्रिपाठी की ओर दया भरी दृष्टि दौड़ा कर कहा— ''दोस्त, आखिर तुम्हारी पत्नी की बात ही सच होने जा रही है। तुम तो दुपहर को घर पहुँचने जा रहे हो ।''

गणेश त्रिपाठी का आक्रोश उमड़ पड़ा, उसने गोविन्द से कहा— ''मैं अपने घर अंधेरा हो जाने के बाद ही लौटूँगा ।''

रात के वक्त घर लौटते हुए पति को देख गणेश की पत्नी बोली— ''आखिर मेरी ही बात सच निकली ।''

''नहीं, तुमने दुपहर की बात बताई थी पर मैं रात को लौटा हूँ। जब अपने कथन के अनुसार नहीं लौट सकता तो तुम्हारे कहे मुताबिक़ मुझे क्यों लौटनां है ? इसलिए मैं जान बूझ कर रात बीतने के बाद ही लौटा।'' गणेश त्रिपाठी ने कहा ।

गणेश की पत्नी की समझ में नहीं आया कि अपने पति की होड़ पर हंसे या गुस्सा करे। वह निरुत्तर हो अचरज के साथ अपने पति के चेहरे को ताकती रही ।

सबसे बड़ा अक्लमन्द

चित्रपुर के मुखिया चौधरी चरण सिंह को बस एक ही शौक था। वह कुछ लोगों को बुला कर उनके सामने छोटी-मोटी परीक्षाएँ रखता और उनमें सफल निकलने वालों को पुरस्कार देकर बहुत खुशी अनुभव करता। एक बार उसके मन में यह पता लगाने की इच्छा पैदा हुई कि अपने गाँव में सब से बड़ा अक्लमंद कौन है।

चौधरी चरण सिंह ने कई लोगों से पूछा कि हमारे गांव का सब से बड़ा अक्लमंद कौन है? पर सब ने यही जवाब दिया— "क्या आप यह छोटी सी बात भी नहीं जानते? हमारे गाँव में राम, भीम और सोम से बढ़कर अक्लमन्द और कौन है?" यह उत्तर सुनने के बाद मुखिया का काम और सरल हो गया।

एक दिन मुखिया ने उन तीनों को बुलवा कर कहा— "मैं ने कई लोगों के मुँह से सुना है कि तुम तीनों बड़े ही अक्लमन्द हो। लेकिन मैं यह जानना चाहता हूँ कि तुम तीनों में से ज्यादा अक्लमन्द कौन है? इस वास्ते मैं तुम लोगों के सामने एक छोटी सी परीक्षा रखना चाहता हूँ। क्या तुम लोग इस के लिए तैयार हो?"

मुखिया के मुँह से ये बातें सुनकर तीनों को आश्चर्य हुआ। लेकिन यह बात उनकी समझ में नहीं आई कि आखिर मुखिया को उनकी परीक्षा लेने की आवश्यकता क्यों आ पड़ी? फिर भी उन लोगों ने सोचा कि उन की जो परीक्षा ली जाने वाली है, उसका थोड़ा-बहुत परिचय पाये बिना स्वीकृति देना उचित नहीं है। इसलिए तीनों ने एक स्वर में पूछा—"कहिए तो वह परीक्षा क्या है?"

मुखिया ने कहा—"तुम तीनों को एक रेगिस्तान के भिन्न प्रदेशों में अन्न-जल दिए बिना छोड़ दूँगा। तुम में से जो पहले हमारे गाँव लौट आएगा, उसको दस मुद्राएँ इनाम दूँगा।"

सरला गुप्ता

"अक्लमन्द आदमी हर प्रकार के कष्ट झेल कर बच कर लौट सकता है। मुझे विशेष प्रकार के इस तरह के जूते बनवा कर दीजिए, जिससे मेरे पैरों को बालू का ताप न लगे और मेरी उँगलियों के बीच रेतीले कण फंस कर मेरी चाल में बाधा न डाले, तब मैं आप की परीक्षा के लिए तैयार हो जाऊँगा।" राम ने उत्तर दिया।

"मैं किसी को यह रहस्य नहीं बताऊँगा कि मैं इस कठिनाई से कैसे बच कर निकल सकता हूँ। पर आप मेरे साथ अपने एक विश्वास पात्र व्यक्ति को भेज दीजिए।" भीम ने कहा। यह उत्तर सुन कर मुखिया ने विस्मय से पूछा—"इस में कोई रहस्य छिपा हुआ है। साफ़ साफ़ बताओ, आखिर तुम्हारा उद्देश्य क्या है।"

"अक्लमन्द आदमी हमेशा अपने साथ एक सहायक को रखना चाहेगा। कठिनाइयों के समय कोई साथ हो तो उसे हल करना बहुत ही सरल हो जाता है। अलावा इस के आप, अपने विश्वास पात्र व्यक्ति को खतरे में डालना नहीं चाहेंगे। इस से मेरा फ़ायदा होगा। उसको रेगिस्तान से बाहर निकल आने का कोई उपाय बताकर ही आप मेरे साथ करेंगे। इसलिए ऐसी परीक्षाओं के लिए इस प्रकार की शर्तें आवश्यक होती हैं।" भीम ने कहा।

मुखिया अब सोम की ओर मुड़कर बोला—"बताओ, तुम्हारा क्या विचार है?"

सोम ने कहा—"यह बात सही है कि अक्लमन्द आदमी हिम्मत, समझदारी और होशियारी के साथ कष्टों को नहीं मोल लेता। आप भले ही मुझ को अक्लमन्द न मानें, मुझे कोई दुख न होगा। पर इन कमबख्त दस मुद्राओं के प्रलोभन में आकर मैं खतरे से भरी यह परीक्षा देने को बिल्कुल तैयार नहीं हूँ।"

यह उत्तर सुनने के बाद मुखिया की समझ में आ गया कि अक्लमन्दी का अर्थ क्या है? उसने सोचा कि अक्लमन्दी की परीक्षा लेने में अपनी दस मुद्राएँ व्यर्थ गँवाना अक्लमन्दी का काम नहीं है। इसलिए उसने यह विचार त्याग कर अपनी दस मुद्राएँ बचा लीं और अपने को ही सबसे बड़ा अक्लमन्द मान लिया।

एक ही बुरी लत

कौशिक महापंडित सदानन्द का इकलौता पुत्र था। वह विवाह योग्य हो चुका था, लेकिन जान-पहचान के लोगों में से कोई भी उस के साथ अपनी बेटी का विवाह करने को तैयार न था।

एक दिन सदानन्द का बचपन का मित्र सोमेश्वर जो गुरुकुल में उनका सहपाठी था अपनी पुत्री के विवाह के लिए रिश्ते की खोज में उसी गाँव में आया। दोनों मित्रों में देर तक बचपन की बातें होती रहीं। उस वार्तालाप के सिलसिले में सोमेश्वर ने अपनी पुत्री के विवाह की बात बताते हुए कहा— "दोस्त, आपके पुत्र कौशिक के साथ मेरी पुत्री का विवाह हो जाये तो क्या ही अच्छा हो! लेकिन मैं ने सुना है कि कौशिक के साथ विवाह का रिश्ता कायम करने को कोई तैयार नहीं है। क्या बात है? उस के अन्दर बुरी आदतें तो नहीं हैं?"

"तुम उसी से क्यों नही पूछ लेते?" सदानन्द ने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया।

उस दिन शाम को सोमेश्वर ने कौशिक को अकेला पाकर पूछा— "बेटा, बुरा न मानो। तुम्हारे अन्दर जुआ खेलने, शराब पीने जैसी बुरी लतें तो नहीं हैं?"

कौशिक ने झट उत्तर दिया— "मेरे अन्दर ऐसी कोई आदत नहीं है।"

जब सोमेश्वर ने सदानन्द से यह बात बताई, तब पल भर मौन रह कर सदानन्द बोले— "मेरे पुत्र के अन्दर एक ही बुरी लत है। वह कभी सच नहीं बोलता।"

सूरज के साथ होड़

प्राचीन काल में एक समय ब्रह्मदत्त काशी पर राज्य करते थे। उस समय चित्रकूट पर्वत पर नब्बे हज़ार हंस निवास करते थे। उसी समय बोधिसत्व ने एक हंस के रूप में जन्म लिया। उसके अन्दर अनेक उत्तम गुण थे। साथ ही वह अत्यंत तेज गति से उड़ सकता था। इसी कारण वह नब्बे हज़ार हंसों का प्रधान बन गया।

ऐसे असंख्य उत्तम गुण व शक्तियों के रखने के कारण हंसों के प्रधान को लोग राजहंस कहने लगे।

एक दिन राजहंस अपने दल के साथ सरोवर में विहार करके अपने निवास को लौट रहा था। मार्ग में वह काशी राज्य के ऊपर से होकर निकला। पक्षियों के उस विशाल दल को देखने पर ऐसा लगता था, मानो सारे काशी राज्य पर सोने का वितान बिछा दिया गया हो।

काशी के राजा ने बड़े आश्चर्य से उस दल की ओर देखा। उन सभी पक्षियों में तारों के बीच चन्द्रमा के समान शोभायमान राजहंस को देखकर राजा जैसे उस पर मुग्ध हो गये।

काशी नरेश उस राजहंस के राजसी ठाट, तेज आदि राजोचित लक्षणों को देख बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने सुन्दर फूल मालाएँ और पुजापा मंगवा कर राजहंस का अभिनन्दन किया।

राजहंस ने राजा का यह अपूर्व आतिथ्य बड़े ही स्नेहपूर्वक स्वीकार किया और अपने परिवार के साथ कुछ दिन वहीं बिताकर अपने निवास को लौट गया।

उस दिन से राजहंस के प्रति काशी नरेश के मन में स्नेह बढ़ता गया। उनका मन सदा राजहंस पर केन्द्रित रहता और दिन रात वे उसी के बारे में सोचते रहते। इस आशा से वे पलक पांवड़े बिछाये राजहंस की प्रतीक्षा करते रहते कि न मालूम वह कब किस दिशा से उधर आ

(जातक कथा)

जाए ।

एक दिन चित्रकूट पर्वत प्रदेश के हंसों में से दो बाल हंस राजहंस के पास आए और बोले— "राजन ! हम दोनों कई दिनों से सूर्य के साथ दौड़ लगाने की इच्छा कर रहे हैं ।"

इस पर राजहंस ने समझाया— "अरे बच्चो ! सूरज के साथ तुम्हारी दौड़ कैसी ! कहाँ सूरज और कहाँ नन्हीं जान तुम ! शायद तुम लोग नहीं जानते कि सूर्य की गति क्या है ? तुम उन के साथ दौड़ नहीं सकते, इस होड़ में तुम्हारे लिए प्राणों का खतरा भी हो सकता है ! अज्ञानता वश तुम लोगों ने यह निर्णय कर लिया होगा । इसलिए तुम दोनों अपना यह कुविचार छोड़ दो ।"

पर उन बालहंसों को हित की ये बातें अच्छी न लगीं । कुछ दिनों के बाद फिर उन बाल हंसों ने आकर सूर्य के साथ उड ने केलिए राजहंस की अनुमति मांगी । इस बार भी राजहंस ने उन्हें मना कर दिया ।

फिर भी उन छोटे हंसों ने अपने विचार को नहीं त्यागा ।

कुछ दिनों के बाद तीसरी बार राजहंस की अनुमति मांगी । इस बार भी राजहंस ने स्वीकृति नहीं दी ।

आखिर अपनी असमर्थता से अनजान हंस के वे दोनों बंच्चे अपने नेता की स्वीकृति के

बिना ही उड़कर युगन्धर पर्वत की चोटी पर पहुँचे । यह चोटी इतनी ऊँची थी, मानो आसमान से बातें कर रही हो । उस ऊँचे पर्वत की चोटी पर पहुँच कर हंस के वे बच्चे सूर्य के साथ दौड़ लगाने का पुनः विचार करने लगे ।

इस के बाद राजहंस ने अपने परिवार के सदस्यों की गिनती की तो पाया कि उन में दो हंसों की कमी है ।

असली बात भाँपने में राजहंस को देर न लगी । लेकिन कुछ सोचकर वह उनके लिए चिन्तित हो उठा ।

फिर सोचा, अब चिन्ता करने से क्या लाभ? किसी तरह से उनकी रक्षा करनी होगी ।

राजहंस शीघ्र ही युगन्धर पर्वत की चोटी पर पहुँचा और बालहंसों से आँख बचा कर एक जगह बैठ गया ।

दूसरे दिन सूर्योदय होते ही वे बालहंस सूर्य के साथ उड़ने लगे ।

राजहंस ने भी उन का अनुसरण किया ।

उन बालहंसों में से छोटा हंस दोपहर तक उड़ता रहा, फिर पंखों में जलन पैदा होने के कारण बेहोश हो गिर गया । गिरते समय उसे राजहंस दिखाई पड़ा । वह निराश हो कर बोला— "राजन, मुझसे यह नहीं हो सका । मैं हार गया ।"

इस पर राजहंस ने उसे सान्त्वना देते हुए कहा, "कोई बात नहीं, मैं तुम्हारी सहायता के लिए हूँ ।" इस प्रकार प्यार भरे शब्दों में समझाकर उसे अपने पंखों पर चढ़ा लिया और अपने निवास में अन्य सदस्यों के बीच छोड़ दिया ।

इस के थोड़ी देर बाद दूसरे बालहंस के पंखों में भी इस तरह पीड़ा होने लगी, मानों उसे सुइयों से चुभोया जा रहा हो ।

आख़िर थक कर वह भी बेहोश होने लगा ।

उसने भी राजहंस को देख दीनतापूर्वक बचाने की प्रार्थना की । उसे भी हिम्मत बंधा कर और अपने पंखों पर बिठा कर राजहंस ने चित्रकूट पर पहुँचा दिया ।

अपने परिवार के दो पक्षियों को सूर्य से परास्त होते देख राजहंस को बहुत दुख हुआ । वह यह अपमान सहन नहीं कर पाया । इसलिए वह स्वयं सूरज के साथ होड़ लगाने चल पड़ा । अपूर्व क्षिप्र गति रखने वाला राजहंस अपनी उड़ान प्रारंभ करने के कुछ ही देर बाद सूर्य बिम्ब से जा मिला और पलक मारते उसे भी पार करके और ऊपर उड़ता चला गया । उसने केवल सूर्य की शक्ति का अनुमान लगाना चाहा था लेकिन उसे सूर्य से होड़ लगाने की आवश्यकता ही क्या थी ।

राजहंस इसलिए थोड़ी देर तक अपनी इच्छानुसार चक्कर काट कर भूलोक पर उतर आया और काशीराज्य में पहुँचा ।

राजहंस की प्रतीक्षा में व्याकुल काशी नरेश उसे देखते ही आनन्द विभोर हो उठे ।

राजहंस को राजा ने अपने स्वर्ण-सिंहासन पर बिठाया तथा स्वर्ण थाल में खीर और स्वर्ण कलश में शीतल शरबत से उसका आतिथ्य किया ।

राजहंस ने राजा का आतिथ्य स्वीकार कर अपनी थकावट मिटाई ।

राजहंस ने सूर्य के साथ उड़ने का सारा वृतांत विस्तार के साथ राजा को सुनाया ।

सारा वृतांत सुनकर राजा राजहंस की अलौकिक शक्ति पर बहुत प्रसन्न हुए । फिर उन्होंने राजहंस से अनुरोध किया— "हे पक्षी राज, सूर्य के साथ होड़ लगाने से भी कहीं अधिक अपनी महान शक्ति और प्रज्ञा दिखाइए । उस दृश्य को देखने की कई दिनों से मेरी प्रबल इच्छा है ।"

राजहंस ने राजा को अपनी शक्ति का परिचय देने की स्वीकृति देते हुए कहा— "राजन, आप के राज्य में विद्युत से भी अधिक द्रुतगति के साथ बाण चलाने की सामर्थ्य रखनेवाले धनुर्धारी हों तो ऐसे चार व्यक्तियों को यहाँ पर बुलवाइए ।"

राजा ने ऐसे चार महान धनुर्धारियों को बुलवाया ।

राजा के उद्यान में एक चौकोर स्तम्भ था । राजहंस ने उस स्तम्भ के चतुर्दिक चारों धनुर्धारियों को खड़ा कर दिया । इस के बाद वह अपने गले में एक घंटी बाँध कर स्तम्भ पर बैठ गया ।
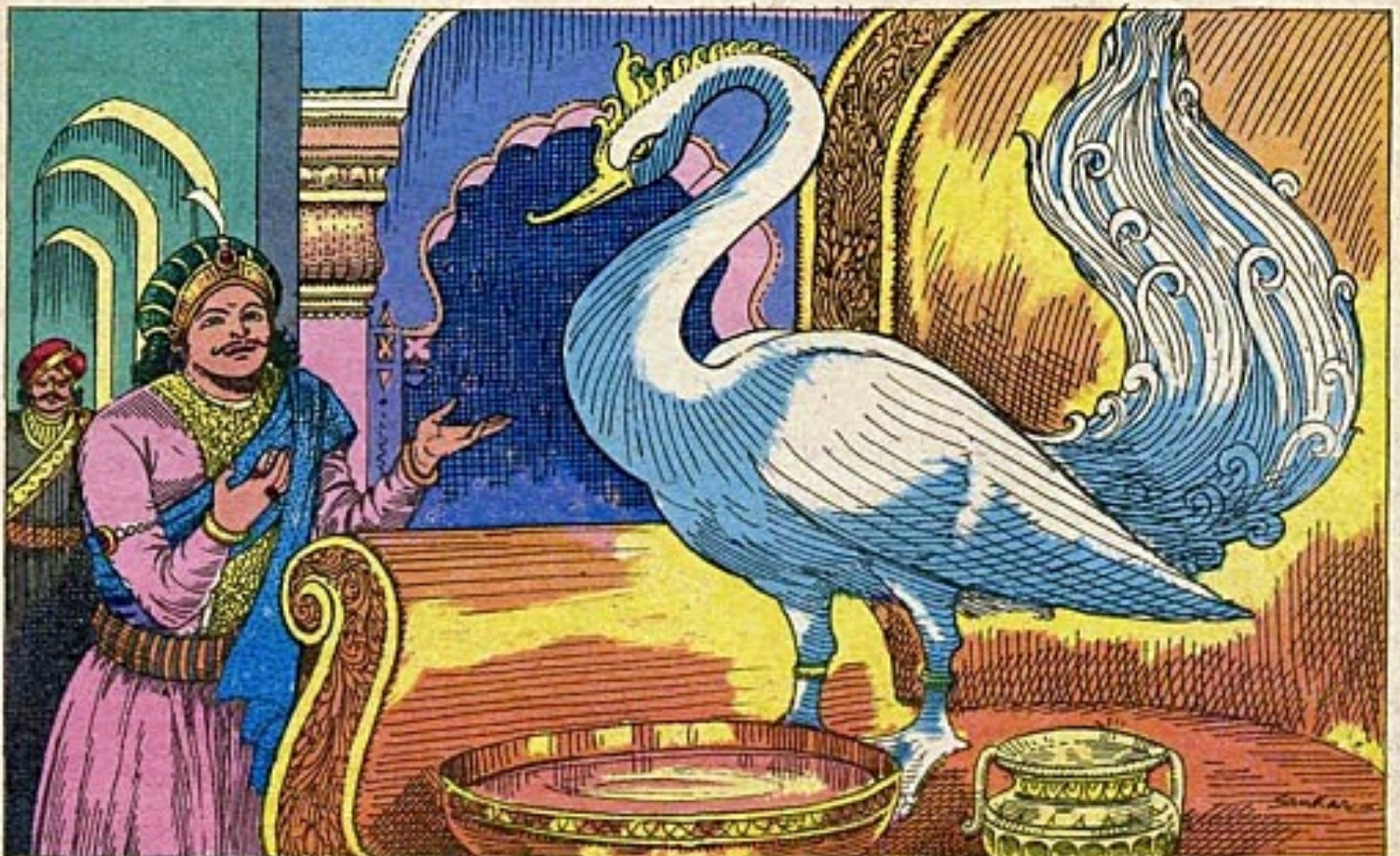
"मेरा संकेत पाते ही तुम चारों अपने बाण छोड़ दो। मैं यहाँ से उड़ कर तुम चारों के बाण ले आऊँगा और तुम्हारे सामने रख दूँगा। पर तुम लोग मेरे कंठ में बंधी घंटी की ध्वनि के द्वारा ही मेरी गति का परिचय पा सकते हो। किसी भी हालत में तुम लोग मुझ को देख न सकोगे।" राजहंस ने उन धनुर्धा रियों से कहा।

अपने वचन के अनुसार विद्युत की कौंध की अवधि के अन्दर राजहंस ने धनुर्धारियों के द्वारा छोड़े गए बाण लाकर उन के सामने रख दिये।

राजा तथा उनका परिवार विस्मय में आकर दातों तले अंगुली दबाने लगे।

इस पर राजहंस बोला— "राजन, आपने जो मेरी गति देखी है, यह मेरी निम्नतम गति है। इसके आधार पर आप अनुमान लगा कर देख सकते हैं कि मेरी वास्तविक गति क्या होगी?"

राजा बड़े ही आतुर होकर बोले— "हे पक्षीराज, तुम्हारे वेग का नमूना तो मैंने देख लिया लेकिन क्या इससे भी अधिक वेग रखने वाला कोई है?"

इस पर राजहंस ने कहा— "क्यों नहीं? मुझ से भी अनन्त गुना अधिक वेग रखने वाली एक महाशक्ति है। वही काल नामक सर्प है। वह काल सर्प प्रति क्षण विश्व के जीवों को अवर्णनीय वेग के साथ नष्ट कर रहा है।"

ये बातें सुन कर राजा एक दम भय के मारे कांप उठे।

तब राजहंस के रूप में स्थित बोधिसत्व ने काशी राजा को इस प्रकार तत्वोपदेश किया— "राजन, जो लोग इस बात का स्मरण रखते हैं कि काल सर्प नामक कोई चीज़ है, उन्हें डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। आप जब तक नीति व धर्म का पालन करते हुए शासन करते रहेंगे, तब तक आप को किसी का कोई भय न होगा। इसलिए आप विधिपूर्वक अपने कर्तव्य करते जाइए।"

बोधिसत्व के उपदेशानुसार काशी राजा ने धर्म मार्ग पर शासन करके अपार यश प्राप्त किया।

बाल-कथा प्रतियोगिता

क्या तुम लेखक बनना चाहते हो ?

तो कोशिश करो एक बाल-कथा लिखने की। सर्वश्रेष्ठ कथा 'चन्दामामा' में प्रकाशित तो होगी ही। साथ में पचास रुपये का नकद पुरस्कार अलग। कथा लिखते समय निम्नलिखित बातों का सावधानी से पालन करो—

* कथा तुम्हारी मौलिक रचना हो— शत-प्रतिशत तुम्हारी अपनी रचना।
* कथा काल्पनिक हो, जिसमें अतिमानवीय पात्र और घटनाएं हों।
* कथा में असत्य पर सत्य की विजय दिखाई गई हो।
* कथा के अन्त में कुछ शिक्षा मिलती हो।
* कथा ३०० से ५०० शब्दों के बीच में हो।
* कथा अब तक कहीं प्रकाशित नहीं की गई हो।
* तुम्हारी रचना निम्न पते पर ३१ जुलाई' ८४ तक पहुँच जानी चाहिए—
  सम्पादक, चन्दामामा हिन्दी, १८८, आरकाट रोड, वड़पलनी
  मद्रास ६०० ०२६
* तुम्हारी रचना स्पष्ट अक्षरों में फुलस्केप कागज पर हाशिया छोड़ कर एक ओर लिखी गई हो।
* कथा-प्रतियोगिता में प्रवेश निःशुल्क है, लेकिन हर प्रवेश के साथ 'चन्दामामा' में प्रकाशित निम्नलिखित घोषणा पत्र का भर कर भेजना अनिवार्य है।

घोषणा पत्र

मैं..पिताका नाम .... उम्र ...... घोषणा करता/करती हूँ कि यह कथा (शीर्षक ....) मेरी मौलिक रचना है। यह अब तक कहीं प्रकाशित नहीं हुई है।

उपर्युक्त कथन सत्य है।

....
लेखक के हस्ताक्षर

....
अभिभावक/अध्यापक के हस्ताक्षर व नाम

हमारा महान् देश !
हमारी महान् संस्कृति !

क्या तुम जानते हो कि ज्ञान की पहली किरण सबसे पहले किस देश की धरती पर उतरी ?

जीवन और मृत्यु क्या है ? जगत की सृष्टि कैसे हुई ? ये ग्रह, नक्षत्र तथा समस्त नभ मण्डल किसने बनाये और ये किसका नियम पालन करते हैं ? इन सारे रहस्यों का ज्ञान सर्वप्रथम किस देश के लोगों ने अनुभव किया ?

हमारे महान देश के प्राचीन ऋषि-मुनियों ने। उन्होंने ही इस ज्ञान की खोज की। उसे अपने जीवन में उतारा। ज्ञान की यह मौखिक परम्परा गंगा की तरह हमारे जीवन में बहती चली आई। आदिग्रंथ वेदों और उपनिषदों के रूप में आज भी हमारी वह गौरवमयी परम्परा जीवित है। वे वेद हैं— साम, अथर्व, यजुर्वेद तथा ऋग्वेद। कुछ मुख्य उपनिषदें हैं — कठोपनिषद, केनोपनिषद, ईशोपनिषद, छान्दोग्य उपनिषद, माण्डूक्य उपनिषद, तैत्तरिय उपनिषद आदि। यह ज्ञान अलग-अलग समय में अलग-अलग ऋषियों की अनुभूति बन कर प्रकट हुआ। लेकिन इस बिखरे ज्ञान को पहली बार संगठित और सम्पादित किया लगभग पाँच हज़ार वर्ष पूर्व महर्षि वेदव्यास ने।

इस गूढ़ ज्ञान को समझ पाना जन-साधारण के लिए सम्भव न था। इसलिए इस ज्ञान से सामान्य जीवन को मार्ग दिखाने के लिए अन्तिम मनु ने "मनुसमृति" बनायी। एक आदर्श समाज की स्थापना के लिए नियम और न्याय पर प्रकाश डालनेवाला यह पहला ग्रंथ हमारी ही महान संस्कृति की देन है।

हमें अपने महान देश और उसकी महान संस्कृति पर गर्व है। आइये, हम सब भारतीय एक होकर इस धरोहर की रक्षा करें और इस ज्ञान-गंगा में डुबकी लगायें।

अमर वाणी

शिरसा तपनं धृत्वा, छायां यच्छति पादवः ।
अनुभूय स्वयं कष्टं, सुजनोन्य सुख प्रदः ॥

[वृक्ष स्वयं तेज धूप सह कर भी अपने आश्रय में रहने वालों को शीतल छाया प्रदान करता है। इसी प्रकार सज्जन लोग स्वयं कष्ट झेल कर भी दूसरों का उपकार करते हैं।]

Enter the
All India Camel Colour
Contest '84

Last date: Oct. 31, 1984

Free entry stamp in every box
of camel art material.

Turn over for more labels
and timetable.

NAME ____________________

SCHOOL ____________________ CLASS ____________________

DAY	1ST PERIOD	2ND PERIOD	3RD PERIOD	4TH PERIOD	INTERVAL	5TH PERIOD	6TH PERIOD	7TH PERIOD	8TH PERIOD
MON									
TUE									
WED									
THU									
FRI									
SAT									

क्या यह सच है ?

ल्यूबेक निवासी क्रिश्चियन हेनरिक हेनेकन (१७२१ से १७२५ तक) दो महीने की आयु में ही बोलने लगा था। एक वर्ष का होते ही वाइबिल की पंक्तियाँ सुनाने लगा। जब वह चार साल का ही था तब उसने "चौथे आयाम के रहस्य" जैसे कठिन विषय पर विद्वान प्रोफेसरों तथा बुद्धिजीवियों के समक्ष भाषण दिया था। उसकी बात को समझनेवाला उसकी बराबरी का कोई व्यक्ति न था। इसलिए जीवन से तंग आकर चार वर्षों के बाद ही उसने शरीर त्याग दिया।

शब्द शक्ति

[अपनी शब्द शक्ति की परीक्षा लीजिये। प्रत्येक शब्द के लिए कुछ सम्भव पर्याय दिये गये हैं। शुद्धतम अर्थ रखने वाले शब्दों को पहचानिये और परिशिष्टांक के पृष्ठ ४ पर दिये गये सही उत्तर से उन्हें मिलाइये।]

१. अभिज्ञ— जाननेवाला, अज्ञानी, कम जाननेवाला, विद्वान
२. अनायास— अचानक, बिना परिश्रम के, एक फल, मुफ़्त
३. अवमान— अपमान, उपेक्षा, आदर, स्वागत
४. अभिराम— बहुत आराम, सुन्दर, निरन्तर, परिश्रम
५. अहर्मुख— साँप का मुँह, उषाकाल, सूर्य, घमण्डी
६. अवधान— एकाग्रता, नियम, सुविधा, बाधा
७. अभिजात— दरिद्र, कुलीन, शिशु, परिचित
८. अचल— पर्वत, धरती, मृत, दृढ़
९. अनुसरण— नकल करना, पीछे-पीछे चलना, शरण में जाना
१०. अब्द— कमल, बादल, वर्ष, सर्प

जिज्ञासा

[इस स्तम्भ के अन्तर्गत तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर दिये जायेंगे। संस्कृति, साहित्य, शिक्षा, इतिहास पर सर्वसाधारण की रुचि को देखते हुए अपनी जिज्ञासा भेज सकते हो। सर्वश्रेष्ठ प्रश्न पर पुरस्कार दिया जायेगा।]

प्रश्नः क्या "महाभारत" को इतिहास का प्रथम ग्रंथ मान सकते हैं ? यदि नहीं तो इतिहास का प्रथम ग्रंथ कौन-सा है।

—गौतम रेड्डी, विनयनगरम्

उत्तरः "महाभारत" में इतिहास के तत्व हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। लेकिन इतिहास से अधिक यह साहित्य और काव्य है। इसमें दर्शन, मनोविज्ञान तथा अध्यात्म ज्ञान भी है। उसे शुद्ध ऐतिहासिक ग्रंथ नहीं मान सकते।

साधारणतः "राज तरंगिनी" को इतिहास का प्रथम प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। उसे १२ वीं शताब्दी में कल्हन ने लिखा था। इसमें कश्मीर के राजाओं की वंशावलि दी गई है।

प्रश्नः यदि संस्कृत को छोड़ दिया जाये तो भारत की प्राचीनतम साहित्यिक भाषा कौन-सी है ?

—शोभा सरकार, कलकत्ता

उत्तरः संस्कृत के बाद तमिल भारत की सर्वाधिक प्राचीन और समृद्ध भाषा है।

प्रश्नः शीत युद्ध किसे कहते हैं ? क्या समझायेंगे ?

उत्तरः जब दो शत्रु-देश हथियार से वास्तविक युद्ध न कर एक दूसरे के विरोध में प्रचार करें और उसे कमजोर बनाने की कोशिश करें तब इस प्रकार की तनाव पूर्ण स्थिति को शीत युद्ध कहते हैं।

शब्दशक्ति के उत्तर

१. जाननेवाला, २. बिना परिश्रम के, ३. उपेक्षा, ४. सुन्दर, ५. उषाकाल, ६. एकाग्रता, ७. कुलीन, ८. पर्वत, ९. पीछे-पीछे चलना, १०. वर्ष.

लॉर्ड बेंटिंक-लॉर्ड डलहौजी

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ब्रिटिश भारत में अपने राज्य को सुदृढ़ और टिकाऊ बनाने का प्रयास करने लगे। धीरे-धीरे भारतीय शासकों का अधिकार घटता गया।

मध्य भारत में पिण्डारी नामक लुटेरे गाँवों में लूटपाट मचाने लगे। उन्हें दबाने के लिए ब्रिटिश सेना ने पूरी कोशिश की। पिंडारियों के नेता पठान अमीर खाँ ने अंगरेजों के अधिकार को स्वीकार कर लिया। वह टोंक का नवाब बना दिया गया। चिट्टू नामक एक और नेता भाग कर जंगल में चला गया। वहाँ वह एक बाघ का शिकार बन गया।

उन दिनों भारत के कुछ प्रदेशों में पति के मरने पर उसकी चिता पर पत्नी के सती होने का प्रचलन था। प्रारम्भ में यह श्रद्धा और भक्ति का प्रतीक था। किन्तु धीरे-धीरे यह भयंकर सामाजिक कुरीति में बदल गया। इसे रोकने के लिए लॉर्ड बेंटिंक ने एक कानून बनाया।
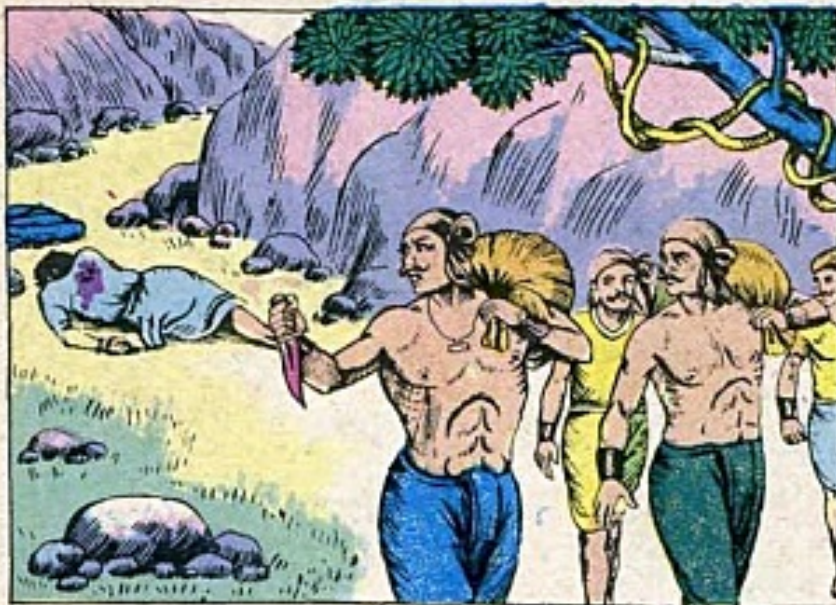
उसी समय कई प्रदेशों में थग नामक लुटेरों का बहुत आतंक छाया हुआ था। लॉर्ड बेंटिंक ने उन्हें भी दबा दिया और बटमारों की लूटपाट से जनता को राहत दिलाई।

कुछ प्रदेशों में उपज बढ़ाने के लिए नर बलि का भी प्रचलन था। इस कुप्रथा को खत्म करने के लिए भी लॉर्ड बेंटिंक ने कठोर क़दम उठाये। इसलिए लॉर्ड बेंटिंक को समाज सुधारक के रूप में भी अच्छी ख्याति मिली।

जब भारतीय राजा अपने अधिकारों से वंचित हो रहे थे, तब पंजाब में महाराजा रणजीत सिंह अपनी ताक़त बढ़ाने में लगे थे। उनके नेतृत्व में सभी सिक्ख एकता के सूत्र में बंध गये। सुदूर भविष्य को ध्यान में रखते हुए रणजीत सिंह ने ब्रिटिश सरकार के साथ मैत्री स्थापित कर ली।

वर्ष १८४६ में लॉर्ड डलहौज़ी भारत के गवर्नर जनरल बन कर आये। रणजीत सिंह की मृत्यु के बाद ब्रिटिश और सिक्खों में युद्ध शुरू हो गया। अन्त में डलहौजी ने सिक्खों को हरा कर पंजाब को भी ब्रिटिश भारत में मिला लिया। इस तरह ब्रिटिश साम्राज्य पेशावर से बर्मा तक फैल गया।

डलहौजी ने यह कानून बनाया कि जिस राजा का कोई पुत्र नहीं है, उसका राज्य ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अधिकार में आ जायेगा। लेकिन उसे यह मालूम न था कि यह कानून भारतीय परम्परा के विरुद्ध है और इससे यहाँ के राजाओं के गौरव को ठेस लगेगी।

इस कानून के अन्तर्गत नागपुर, संबलपुर तथा सतारा राज्य ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन हो गये। वर्ष १८५३ में झाँसी के राजा गंगाधर राव ने एक बालक को दत्तक पुत्र बनाया, लेकिन डलहौजी ने इस बात को स्वीकार नहीं किया। गोद लेने के बाद ही राजा की मृत्यु हो गई।

उसी वर्ष महाराष्ट्र के शासक द्वितीय पेशवा बाजी राव ने नाना साहेब को अपना वारिस बनाया। डलहौजी ने इसे भी स्वीकार नहीं किया। इससे नाना साहेब अंगरेजों के कट्टर शत्रु बन गये।

साम्राज्यवादी होते हुए भी डलहौजी ने देश के विकास में काफी रुचि ली। उसी के प्रयत्न से वर्ष १८५३ में बम्बई से थाना तक भारत में प्रथम रेल मार्ग का निर्माण हुआ।
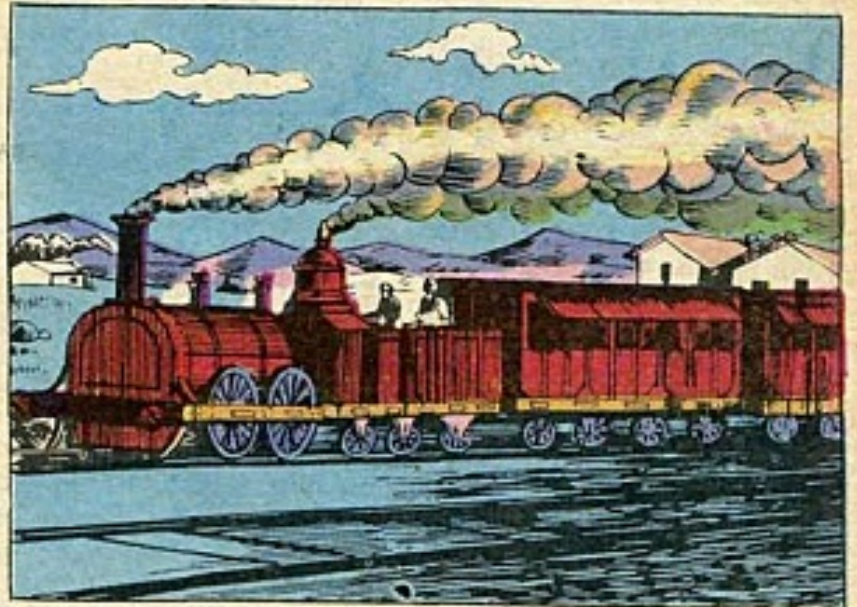
उसी के समय में यहाँ टेलिग्राम प्रणाली का विकास हुआ। उसने डाक सेवा के बदले आधा आना शुल्क देने का भी नियम बनाया। कलकत्ता, बम्बई तथा मद्रास में उसने विश्व विद्यालय की स्थापना करने का भी प्रयास किया।

"मैं मूर्ख हूँ"

एक समय एक गाँव में एक साहूकार रहता था। नाम था शिलामुख। इसके पास अपार सम्पत्ति तो थी ही, उसके अतिरिक्त उसका एक विशाल बाग भी था। उसमें सभी तरह के फलों के वृक्ष लगे थे। शिलामुख अपने बाग के एक कोने में बनी एक छोटी सी झोंपड़ी में ही निवास करता था।

शिलामुख एक नम्बर का कंजूस था। अपने बाग का फल न तो वह स्वयं खाता था और न किसी को खाने देता था।

पेडों से फलों को तोड़ने के लिए उसने बहुत से नौकर रखे थे। वे फलों को तोड़ कर टोकरियों में भर देते। शिलामुख स्वयं उन सब की बड़ी सावधानी से गिनती करता और प्रत्येक फल की चवन्नी, अठन्नी कुछ क़ीमत लगा कर हिसाब भी लगाता।

एक बार एक मज़दूर एक गिरा हुआ आम का फल लेकर चखने लगा। शिलामुख ने उसे झिड़कते हुए कहा— "अबे, उस फल का दाम एक रुपया है और तुम्हारी मज़दूरी आधा रुपया है। इसलिए आज तुम को मज़दूरी नहीं मिलेगी। आधा रुपया तुम से मुझ को मिलना है। कल आकर मुफ़्त काम करोगे तब तुम्हारा क़र्ज चुक जायेगा।"

मज़दूर सुबह से बिना खाये-पिये काम पर लगा हुआ था। उसने एक सड़ा हुआ आम थोड़ा-सा चख कर देखा तो उसकी मज़दूरी कट गई। इसलिए शिलामुख की बात सुनते ही वह आग बबूला हो गया। दोनों में बात बढ़ गई और दोनों गालियों के बाद हाथा पाई पर उतर आये। मज़दूर ने क्रोंध में आकर शिलामुख को बुरी तरह से पीट दिया। उस दिन से शिलामुख ने फल तोड़ने के लिए किसी नौकर या मज़दूर को नहीं रखा।

शिलामुख के मुँह में भी पके हुए फलों को देख कर पानी आता, लेकिन वह अपने मन पर

(पचीस वर्ष पूर्व चन्दामामा में प्रकाशित कहानी)

क़ाबू कर लेता। सोचता— "एक आम कम से कम चार आने में तो बिक ही जायेगा। यदि ऐसे क़ीमती फल स्वयं ही खा लूँ तो मेरी आमदनी घट जायेगी।"

समय बीतता गया। तरह-तरह के फल पक कर पेड़ों से गिर जाते। उन्हें उठा कर टोकरियों में रखनेवाला फिर कोई मज़दूर नहीं आया। शिलामुख भी उन्हें जमीन पर गिर कर बर्बाद होते देख चुपचाप रह जाता। जब कुछ लोग मज़दूरों से फल तोड़वाने की सलाह देते तो शिलामुख यही कहता— "मैं इतना मूर्ख नहीं हूँ कि मज़दूरों पर विश्वास करूँ। फल तोड़ते समय ये सारा फल खा जाते हैं। यदि उन्हें फल की क़ीमत अदा करने के लिए कहता हूँ तो ये मार-पीट करने लगते हैं। ऐसी हालत में मैं मज़दूरों को रख कर इतना झंझट क्यों मोल लूँ।"

एक दिन शिलामुख बगीचे का चक्कर लगाते वक्त वह इस प्रकार हिसाब लगाने लगा-इस बगीचे में कुल कितने पेड़ हैं? किस पेड़ में कितने फल लगे हैं? कितने फल कर नीचे गिरे हैं? डालों पर लटकने वाले कुल फल कितने हैं?

शिलामुख बगीचे में टहल रहा था। तभी आम की एक डाली पर बैठा एक पक्षी मधुर स्वर में गाने लगा। वह देखने में गौरैये के बराबर था और उस की पूँछ में इन्द्रधनुष के सातों रंग थे। उस छोटे पक्षी का मधुर गान सुनकर ऐसा लगता था कि उसके मोहक गीत से पुलकित हो कर ठूंठ में भी कोंपल निकल आयेगी।

पक्षी के उस मधुर गान को सुन कर शिलामुख तन्मय हो उठा। उसने पीछे से जाकर उस पक्षी को अपनी मुट्ठी में पकड़ लिया। लेकिन पक्षी ने न छटपटाने की कोशिश की और न क्रोध में आकर उस पर चोंच मारने का प्रयत्न ही किया।

"शिलामुख, मुझ को छोड़ दोगे तो तुम्हें लाभ पहुँचाने वाली तीन सूक्तियाँ सुनाऊँगा।" पक्षी बोला।

पक्षी के मुँह से यों मानव की बोली में बातें सुन कर शिलामुख पहले तो घबरा गया। फिर

उस ने पूछा— "क्या सचमुच तुम लाभ पहुँचाने वाली सूक्तियाँ सुनाओगे ?"

उसने समझा कि लाभ धन के ही रूप में होगा ।

"हाँ, हाँ, सचमुच लाभ पहुँचाने वाली सूक्तियाँ सुनाऊँगा।" पक्षी ने इस बार ज़ोर देकर कहा ।

इस पर शिलामुख ने कोई प्रतिवाद किये बिना पक्षी को अपनी मुट्ठी से मुक्त कर दिया। दूसरे ही क्षण वह उड़ गया ।

शिलामुख के कानों में जब 'लाभ' शब्द सुनाई पड़ा, तब वह अपना विवेक खो बैठा।

पक्षी उड़ कर समीप के आम की डाली पर बैठ गया। शिलामुख मुँह बाये कान खड़े करके ताकता रहा कि पक्षी के मुँह से न मालूम लाभ की कैसी बातें निकलेंगी ।

पक्षी बोला— "लो भाई कान खोल कर सुनो, मेरी पहली सूक्ति है- जो नहीं है, उसकी चिन्ता न करो ।"

"क्या मैं इतनी सी बात भी नहीं जानता ? ये बातें तो मैं ने बचपन में ही क़िताबों में पढ़ ली थीं। तुम्हारी ये बेतुकी बातें सुनूँ, मैं कोई इतना मूर्ख नहीं हूँ।" शिलामुख ने गुस्से में आकर कहा ।

"शिलामुख, तुम सचमुच मूर्ख हो। वरना तुम इतनी देर तक मुझ को अपनी मुट्ठी में रख कर भी यह समझ नहीं पाए कि मेरे शरीर के अन्दर एक मन सोना भरा है।" पक्षी ने मज़ाक

उड़ाया ।

"एक मन सोना ? सचमुच एक मन !!— उफ़, मुझे दुख है कि तुमको मुक्त करके मैं ने कैसी भारी भूल की !" यह जवाब देकर शिलामुख पछताने लगा ।

इस पर पक्षी ठठाकर हंस पड़ा और अपने पंख फड़ फड़ाते हुए बोला— "शिलामुख, तुम सचमुच मूर्ख हो। परम मूर्ख ! आखिर तुम कैसे विश्वास कर पाये कि छोटे गौरैये के बराबर मेरी देह के अन्दर एक मन सोना भरा रह सकता है ?"

शिलामुख क्रोध में दांत पीस रहा था । लेकिन उसकी परवाह किये बिना पक्षी पुनः बोला— "मेरी दूसरी सूक्ति सुन लो-लोग जो

कुछ कहते हैं- उन सब की सभी बातों को सच न मानो ।''

''यह सूक्ति भी कोई नई नहीं है ! मैं ने बचपन में पढ़ ली है । इसमें कौन सी नई बात है ?'' शिलामुख ने आँखें लाल-पीली करके कहा ।

''तुम ऐसे मूर्ख हो, जो यह मानता है कि वह सब कुछ जानता है । अब मेरी तीसरी सूक्ति सुन लो— ''अपनी मुट्ठी में बन्द लक्ष्मी को त्याग कर उसे तुम पेड़ की डालों पर मत खोजो !'' पक्षी ने अन्तिम सूक्ति सुनाते हुए कहा ।

यह सुन कर शिलामुख और भी क्रोधित हो उठा और पागल की तरह पक्षी को पकड़ने के लिए झपटा । उसे इस बात का अब भी विश्वास था कि उस पक्षी में अवश्य ही सोना छिपा होगा । वह इसी लालच से उसे पकड़कर उससे सोना निकाल लेना चाहता था । साथ ही वह उसे उसकी मूर्खतापूर्ण बातों के लिए सबक़ भी सिखाना चाहता था । इसी ख्याल से पक्षी जिधर उड कर जाती उसी के पीछे वह दौड़कर जाता था ।

उसी वक्त बगीचे के अन्दर एक बवण्डर उठा जो सूखे पत्तों को उड़ाते हुए हर पेड़ के समीप पहुँचा । उस बवण्डर में बाग के सभी वृक्ष जड़ सहित उखड़ कर एकदम धराशायी हो गये ।

इस पर भयभीत हो शिलामुख ने आँखें मूँद लीं । उसने आँखें खोलकर देखा-वहाँ पर कुछ भी नहीं बचा था । डाल पर बैठा छोटा पक्षी भी अन्तर्धान हो गया था । शिलामुख का निवास-यानी उसकी झोंपड़ी की छत भी उड़ गई थी । वहाँ पर सिर्फ़ नंगी दीवारें नज़र आ रही थीं ।

''लक्ष्मी देवी ने मुझ को सारी संपदाएँ दीं लेकिन मैं इसका अनुभव न कर सका । आखिर वह सारी संपत्ति मिट्टी में मिल गई । जो कुछ संपदा मुझे प्राप्त थी, उसी को भी मैं खो बैठा । इसलिए सचमुच मैं मूर्ख हूँ ।'' ऐसा कह कर वह विलाप करने लगा ।

मालिक और नौकर

चैतन्य श्रृंगेरीगिरि ग्राम का एक सुखी सम्पन्न व्यक्ति था। हाल ही में उसका धूमधाम से विवाह हुआ था। उसकी पत्नी चित्रा भी एक धनी परिवार की बेटी थी। चैतन्य अपनी पत्नी को उसके जन्म दिवस पर दस हज़ार रुपयों का एक हार उपहार में देना चाहता था। इसलिए वह एक दिन पूर्व हार खरीदने के लिए शहर चला गया।

शहर से गाँव लौटने में शाम को देर हो गई। अन्धेरा होने के पहले ही वह गाँव लौट आना चाहता था। इसलिए उसने जयराम को घोड़े को थोड़ा और तेज हाँकने के लिए कहा। जयराम उसका गाड़ीवान था।

जयराम ने सिर हिला कर घोड़े को चाबुक लगाया और तेज चलने को उसे ललकारा। गाड़ी तेज रफ़्तार से चल पड़ी। लेकिन अभी गाड़ी बहुत दूर भी नहीं गयी थी कि अचानक रुक गई।

"गाड़ी क्यों रोक दी?" चैतन्य ने जयराम को डाँटते हुए पूछा।

जयराम ने सड़क के किनारे खड़े एक आदमी की ओर इशारा करते हुए कहा— "मालिक! यह आदमी मेरी पत्नी का चचेरा भाई काशीराम है। यह भी हमारे ही गाँव जा रहा है। इसका नाना नाजुक हालत में है। गाँव जल्दी पहुँच जाने पर कम से कम यह उसको अन्तिम बार देख सकेगा। आप की आज्ञा हो तो इसे भी साथ बैठा लें?"

वैसे चैतन्य कभी किसी को अपनी गाड़ी में बैठाना पसन्द नहीं करता। फिर भी वह खीझता हुआ बोला— "तो इसका मतलब है कि यह गाड़ी पर सवार होना चाहता है। अच्छी बात है। उस से कह दो कि गाड़ी में आ जाए।" जयराम का रिश्तेदार काशीराम चैतन्य को प्रणाम करके गाड़ी में आ बैठा।

गाड़ी फिर से चल पड़ी। जयराम जब-तब

रमाशंकर

जोर से चिल्लाकर घोड़े को ललकार रहा था। रास्ता ऊबड़-खाबड़ था। एक जगह गाड़ी जब मुड़ रही थी तब उसका एक पहिया एक गड्ढे में धंस गया। इस पर जयराम झट नीचे कूद पड़ा। चैतन्य और काशीराम लूढ़क कर नीचे गिर गये। चैतन्य की फल की टोकरियाँ और अन्य सामान भी नीचे बिखर गये।

काशीराम पहले उठ खड़ा हुआ। तब जयराम और काशीराम ने मिलकर चैतन्य को उठाया। चैतन्य के दायें पैर में थोड़ी मोच आ गई। इस के बाद जयराम और काशीराम ने सारी ताक़त लगाकर गाड़ी के पहिये को गड्ढे से बाहर निकाला। तब काशीराम ने नीचे गिरे हुए माल को उठा कर गाड़ी में करीने से रख दिया। इस के बाद गाड़ी फिर चल पड़ी। गाँव में पहुँचते ही काशीराम गाड़ी से उतर कर चला गया।

चैतन्य गाड़ी से उतर कर लंगड़ाते हुए दालान की ओर जा ही रहा था कि उसी वक्त चैतन्य की पत्नी चित्रा सामने आ गई। उसने बड़ी आतुरता से पूछा— "मेरी वर्ष गाँठ की भेंट कहाँ है?"

यह सवाल सुनते ही चैतन्य का मन कचोट उठा। उस की पत्नी ने उस के लंगड़ाते पाँव और चोट की चिंता किये बिना अपनी भेंट की सबसे पहले परवाह की।

"रास्ते में गाड़ी एक गड्ढे में धंस गई। हम भारी खतरे से बाल-बाल बच गए।" चैतन्य ने, फिर भी, नाराज़ हुए बिना अपना हाल बताते हुए कहा।

"यह बात मैं फिर आराम से सुन लूँगी। पहले बताइए, मेरी भेंट किधर है।" यों कह कर चित्रा ने अपने पति के हाथ से झट थैली ले ली और उस के अन्दर रखा मजूंषा निकाला।

चित्रा ने मंजूषा का ढक्कन खोलते हुए कहा— "मेरी एक सहेली आज सुबह हमारे गाँव में आ गई है। आप कोई मामूली उपहार तो नहीं लाए हैं?" यों कह कर उस ने मंजूषा खोल कर देखा। फिर विस्मित और अवाक् हो पति की ओर ताकती रह गई।

पत्नी के आश्चर्य का कारण न समझकर चैतन्य ने भी मंजूषा पर दृष्टि डाली। उसमें हार

नहीं था ।

चित्रा ने चैतन्य की ओर क्रोध भरी दृष्टि से देखा । फिर कहा— "क्या यही मेरे जन्म दिन का उपहार है ? क्या आप मेरा मजाक़ तो नहीं उड़ा रहे हैं ?" फिर उस मंजूषा को जमीन पर पटक कर वह अपने कमरे के भीतर चली गई ।

पत्नी की मूर्खता पर चैतन्य को गुस्सा आ गया । उसने अपनी पत्नी को डांटना चाहा, पर वह संभल गया और सोचने लगा— "पहले चोरी का पता लगाना है । यह काशीराम की ही क़रतूत होगी ।"

यों सोच कर वह अस्तबल की ओर गया । वहाँ पर जयराम घोड़े को दाना खिला कर घर जाने की तैयारी कर रहा था । चैतन्य ने उस को रोक कर डांटा— "तुमने अपनी पत्नी का रिश्तेदार बता कर एक चोर को गाड़ी पर बिठा लिया । गाड़ी से जब माल नीचे गिरा, तब उसने मेरे दस हज़ार मूल्य का हार चुरा लिया और खाली पेटी को मेरी थैली में रख दिया । तुम इसी वक्त जाकर उस के हाथ से हार ले आओ । वरना बहुत बुरा होगा, खाली हाथ मेरे घर मत लौटना ।"

दस हज़ार मूल्य के हार के खो जाने की ख़बर सुनते ही जयराम को लगा, मानो उसके सर पर गाज गिर गई हो । उसकी समझ में नहीं आया कि मालिक को क्या उत्तर दे । चुपचाप उसने सर झुका लिया । इसके बाद जब चैतन्य वहाँ से चला गया तब वह दौड़ कर अपनी

झोंपड़ी में पहुँचा ।

जयराम की पत्नी अपनी झोंपड़ी के सामने पति का इंतज़ार कर रही थी । जयराम ने उसके नजदीक़ जाकर दांत पीसते हुए कहा— "तुम्हारे रिश्तेदार नामी डाकू हैं । तुम्हारे भाई काशीराम ने हमारे मालिक की थैली में से दस हज़ार रुपये का हार हड़प लिया है । उसने कहा था कि तुम्हारा नाना बीमार है । इसलिए उसे गाड़ी में जगह दी । तुम अभी जाकर उसके यहाँ से वह हार ले आओ ।"

जयराम की पत्नी ने जब यह सुना कि उसका नाना मौत की घड़ियाँ गिन रहा है, तब वह यह बात भूल गई कि काशीराम ने उसके मालिक का हार चुरा लिया है ।

"नाना बीमार पड़ गये ? मुझे को किसी ने ख़बर तक नहीं दी।" यह क़ह कर वह अपने नाना के घर दौड़ पड़ी ।

चैतन्य अस्तबल से लंगड़ाते हुए अपने मकान के फाटक के पास ज्यों ही पहुँचा उसने देखा कि उसकी पत्नी की उम्र की एक औरत ड्योढ़ी से उतर कर गली में जा रही है। चैतन्य रुक कर परख कर देखने लगा कि यह औरत कौन हो सकती है। इतने में चित्रा उसका हाथ पकड़ कर बोली— "आप के पैर का दर्द कैसा है ? मेरी सहेली इसलिए आई थी कि आप मेरे वास्ते जो भेंट लाये हैं उसे देख ले। पर उसने मेरी आँखें खोल दीं। आज तक मैं ने आपके साथ बड़ा ही मुर्खता पूर्ण व्यवहार किया है।"

ये बातें सुनकर चैतन्य फूला न समाया। वह इस खुशी में यह भूल गया कि उस के पैर में मोच आई है और दस हज़ार मूल्य का हार खो गया है। इस के बाद वह अपनी पत्नी का सहारा लेकर घर के भीतर चला आया ।

दूसरे दिन सवेरे चैतन्य चबूतरे पर बैठ कर जयराम का इन्तज़ार कर रहा था। तभी शहर का वह जौहरी आ पहुँचा, जिस के यहाँ से चैतन्य ने हार खरीदा था। वह तपाक से बोला— "माफ़ कीजिएगा, कल हमारी दुकान के कर्मचारी ने हार वाली पेटी के बदले उसी प्रकार की खाली पेटी आप के हाथ दे दी। रात को जब हम लोग दुकान बन्द करने लगे तब हमें अपनी भूल मालूम हुई।" यह कह कर दुकानदार ने वह हार चैतन्य के हाथ सौंप दिया ।

चैतन्य ने दुकान के मालिक की ईमानदारी की तारीफ़ की और भोजन करने का अनुरोध किया। पर दुकानदार यह कहकर तुरन्त चला गया कि दुकान में उसके बिना कोई काम नहीं चलता ।

इसके बाद चैतन्य थोड़ी देर तक जयराम के इन्तज़ार में बैठा रहा। फिर अपनी पत्नी को हार देने के ख्याल से जैसे ही उठा, तभी जयराम आ पहुँचा। वह कुछ कहने को ही था कि चैतन्य ने उस को रोक कर हार दिखाते हुए कहा— "अरे जयराम, कल मैं हार के खो जाने के भ्रम में पड़ गया था। यह अच्छा ही हुआ। जानते

हो, तुम्हारी मालकिन के अन्दर कैसा परिवर्तन हुआ है ? हम हार को दुकान पर ही छोड़ आये थे। उस दुकान का मालिक थोड़ी देर पहले यह हार दे गया है। अब हार को लेकर तुम्हें परेशान होने की ज़रूरत नहीं है। जाओ, अब अपना काम देखो।''

जयराम दोनों हाथ उठाकर चैतन्य को प्रणाम करके बोला— ''बाबूजी, काशीराम पर हार चुराने का आरोप लगाना मेरे लिए भी अच्छा हुआ है।''

''किस तरह से !'' चैतन्य ने पूछा।

''मैं ने घर लौटते ही अपनी पत्नी को उसके नाना के घर भेज दिया। काशीराम यहाँ पर इस ख्याल से आया था कि मौत की घड़ियाँ गिनने वाला उसका नाना अपनी बची खुची संपत्ति उसे दे देगा। बूढ़े ने जब उसे कुछ नहीं दिया तो वह उसे गालियाँ सुनाता अपने गाँव लौट गया। मेरी पत्नी ने रात भर वहीं बैठ कर बूढ़े की सेवा की। इस पर बूढ़े ने खुश हो कर मेरी पत्नी को अपनी छिपाई हुई संपत्ति की जगह बता दी और मेरे द्वारा अपनी अन्त्येष्टि क्रिया करवाने का अनुरोध किया।'' जयराम ने कहा।

''वाह, वाह ! तुम तो बड़े भाग्यवान हो। लेकिन हाँ यह तो बताया नहीं, बूढ़ा कितनी संपत्ति छोड़ गया है ? भारी रक़म तो नहीं ?'' चैतन्य ने पूछा।

''जी हाँ, मालिक। मैं उस संपत्ति को पूँजी बनाकर कोई व्यापार शुरू करना चाहता हूँ।'' जयराम ने विनयपूर्वक उत्तर दिया।

यह उत्तर सुनने के बाद चैतन्य को इस बात का दुख हुआ कि रात को नाहक़ वह जयराम पर बिगड़ गया था। इस के बाद वह जयराम की ओर स्नेह भरी दृष्टि दौड़ा कर बोला— ''आखिर इस हार ने हम दोनों का बड़ा भला किया है। मुझे इस बात की खुशी है कि तुम व्यापार शुरू करने के बाद अपने पैरों पर खड़े हो जाओगे। तुम जो व्यापार करने जा रहे हो, उसमें अगर मेरी मदद की जरूरत पड़े तो निस्संकोच बताना। मदद करके मुझे बहुत खुशी होगी।''

उत्तम कार्य

नाग पत्तणम में शंकर गुप्त नाम का एक प्रसिद्ध जौहरी रहता था। वह देश-विदेश के साथ बड़े पैमाने पर नौका-व्यापार भी किया करता था। अपार संपत्ति का मालिक होकर भी वह धार्मिक कार्यों में कभी चन्दा नहीं देता था। पर अक्सर वह लोगों से यही कहा करता— "तुम लोग मुझ को कंजूस मत समझो। धार्मिक कार्य तथा जन-कल्याणकारी कार्य करने के लिए मेरे सामने काफी समय पड़ा हुआ है। मैं कभी लाखों रुपये खर्च करके नगर में अद्भुत मन्दिर बनवा सकता हूँ।"

एक दिन शंकर गुप्त के घर एक पुजारी आया और उसने निवेदन किया— "कृपया पुराने मन्दिर के जीर्णोद्धार के लिए उचित धन की सहायता करें।"

वैसे शंकर गुप्त उस समय दान देने के पक्ष में न था, पर पुजारी को देखते ही शंकर गुप्त को उस पर दया आ गई और उसने सौ स्वर्ण मुद्राएँ लाकर पुजारी को दे दीं। उसी वक्त शंकर गुप्त का एक गुमाश्ता दौड़ा हुआ आया और सूचना दी कि शंकर गुप्त का एक जहाज क़ीमती माल के साथ डूब गया है।

शंकर गुप्त ने क्षमा मांगते हुए पुजारी के हाथ से सौ स्वर्ण मुद्राएँ वापस ले लीं और अपने कमरे में चला गया। पुजारी ने सोचा कि परिस्थिति उसके अनुकूल नहीं है! इसलिए वह वापस लौट रहा था। तभी शंकर गुप्त ने आकर उसके हाथ में एक हज़ार स्वर्ण मुद्राएँ रख दीं और मंदहास करते हुए कहा— "भगवान मुझको सबक सिखा रहे हैं कि संपत्ति के रहते समय ही मैं उत्तम कार्य कर लूँ। इसका क्या भरोसा, कब चला जाये।"

सूक्ष्म दृष्टि

शिवनाथ और शंभुप्रसाद दोनों घनिष्ठ मित्र थे। शिवनाथ लखपति था। खेतीबाड़ी के साथ वह गल्ले का व्यापार भी करता था। उसके यहाँ रंगनाथ नामक एक गुमाश्ता था।

शंभुप्रसाद अक्सर शिवनाथ के घर आया-जाया करता था। उसके घर जो भी किसी काम से आते, वे उसके प्रति अत्यन्त आदर दिखाते और विनयपूर्वक बात करते थे। लेकिन रंगनाथ वैसे आदर और विनय नहीं दिखाता था, पर अपने मालिक के सवालों का संक्षेप में जवाब दे कर अपने काम में चुपचाप लग जाता था। फिर भी शंभुप्रसाद ने शिवनाथ को कभी अपने गुमाश्ते को डांटते-डपटते नहीं देखा था।

एक बार शंभु प्रसाद तीर्थाटन के लिए गया और दो महीने बाद अपने गाँव लौट आया। उसी दिन शाम को वह शिवनाथ से मिलने उस के घर पहुँचा। उस समय रंगनाथ शिवनाथ से कुछ बातें कर रहा था। उस बातचीत में शंभुप्रसाद ने पहले से कहीं ज्यादा परिवर्तन देखा। वह अपने मालिक की हर बात के प्रति अदब दिखाते हुए 'जी हुजूर !' 'जी मालिक !' कह रहा था। शंभुप्रसाद ने थोड़ी देर तक शिवनाथ को अपने तीर्थाटन के समाचार सुनाए, फिर कहा— "दोस्त क्या बात है। तुम्हारे गुमाश्ता की बातचीत और व्यवहार में मुझे बड़ा परिवर्तन दिखाई दे रहा है। मैं ने आज तक इस प्रकार विनय दिखाते हुए तुम्हारे साथ बातचीत करते नहीं देखा था।"

शिवनाथ ने पहले तो इसका उत्तर देना चाहा, किन्तु फिर थोड़ा रुक कर सर हिला कर चूप रह गया।

इस घटना के एक सप्ताह बाद शंभुप्रसाद शिवनाथ के घर फिर आया। उस समय उसे रंगनाथ की जगह कोई नया गुमाश्ता दिखाई दिया। शंभुप्रसाद ने आश्चर्य से शिवनाथ से

कामता प्रसाद

पूछा— "सुनो, रंगनाथ कहीं दिखाई नहीं देता, क्या उस की जगह तुमने कोई नया गुमाश्ता तो नहीं नियुक्त किया है ?"

"हाँ, रंगनाथ को मैं ने निकाल दिया है। उसका काम देखने वाला यह नया गुमाश्ता है।" शिवनाथ ने उत्तर दिया।

"ऐसा क्यों किया ? इधर कुछ दिन पहले रंगनाथ के अन्दर बड़ा परिवर्तन देख मुझे बड़ी खुशी हुई थी।" शंभुप्रसाद ने कहा।

"उसी परिवर्तन के कारण उस को काम से निकालना पड़ा।" शिवनाथ ने इतमीनान से उत्तर दिया।

शिवनाथ की बातें शंभुप्रसाद की समझ में नहीं आईं। उसने कहा— "पहले रंगनाथ के अन्दर अपने मालिक के प्रति जो विनय और आदर का भाव होना चाहिए था, वह मुझे दिखाई नहीं दिया, इसलिए मैं ने सोचा था कि तुम उस के व्यवहार को कैसे सहन कर पाते हो। पर इधर कुछ दिन पहले उसके अन्दर परिवर्तन देख मैं बड़ा खुश हो गया था।"

तुमने उसके भीतर यह जो अच्छा परिवर्तन देखा, वही मेरे लिए सन्देह का कारण बन गया। पता लगाने पर मेरा सन्देह सच निकला। वैसे रंगनाथ अपने काम में समर्थ है, इस में कोई सन्देह नहीं। घर के चाकर की तरह उसे मेरे हर आदेश पर जी हुजूर, जी मालिक कह कर भेड़ की भांति सिर हिलाने की कोई जरूरत नहीं है। इसीलिए उस के व्यवहार में मुझे कभी घमण्ड या अहंकार दिखाई नहीं पड़ा। पर इधर कुछ दिनों से उसने बड़ी विनयशीलता के साथ चिकनी चुपड़ी बातें करना शुरू कर दी थीं। इसे देख मेरे मन में सन्देह पैदा हुआ। जाँच-पड़ताल करने पर पता चला कि मेरे यहाँ जो भी किसी काम से आता है, उन सब से वह रिश्वत लिया करता है। इसी वजह से मैं ने उसे काम से तुरन्त हटा दिया।" शिवनाथ ने कहा।

शंभुप्रसाद शिवनाथ की तीक्ष्ण बुद्धि से बहुत प्रभावित हुआ और मन ही मन उसने अपने मित्र की सूझ बूझ और सूक्ष्म दृष्टि की प्रशंसा की।

विष्णु पुराण

शकुनि दुर्योधन की माता गांधारी का छोटा भाई तथा गांधार देश के राजा सुबल का पुत्र था ।

राजा सुबल को ज्योतिषियों ने बताया था कि गांधारी का विवाह होते ही उसके पति का देहांत हो जायेगा । इसलिए सुबल ने पहले एक भेड़े के साथ गांधारी का विवाह कराया । उसके बाद धृतराष्ट्र के साथ उस का विवाह किया गया । विवाह के बाद भेड़े की मृत्यु हो गई ।

यह समाचार दुर्योधन को उस वक्त मालूम हुआ, जब भीम ने दुर्योधन का विधवा पुत्र गोलक कह कर मज़ाक़ उड़ाया ।

दुर्योधन इस पर क्रोधित हो उठा । वह सुबल और शकुनि को बन्दी बना कर ले आया और उनको कारागार में डालकर भयंकर यातनाएँ दीं ।

सुबल तपोबल की कुछ महिमाएँ रखते थे । उन्होंने अपनी मृत्यु के पहले शकुनि को समझाया कि उनकी अस्थियों से पांसे बनाकर उनके द्वारा दुर्योधन से प्रतिकार करे । उन पांसों की यह विशेषता होगी कि जिस अंक की कामना से वह पांसा फेंकेगा, वही अंक प्रत्यक्ष हो जायेगा ।

शकुनि के पांसों के महत्व को दुर्योधन ने कारागार के पहरेदारों के द्वारा जान लिया और उसने अपने मामा शकुनि को कारागार से मुक्त करके उसको अपना मंत्री बना लिया ।

इसके बाद हस्तिनापुर में शकुनि और युधिष्ठिर के बीच जुआ शुरू हुआ । उसमें युधिष्ठिर अपने साथ अपने छोटे भाइयों और

१८. कृष्ण-पांडवीयम

द्रौपदी को भी दाँव पर रखकर हार गए ।

उसी समय द्वारका में श्रीकृष्ण सत्यभामा के साथ पांसें खेलते हुए अपने साथ अपनी सात और पत्नियों को दाँव पर रखकर हार गए ।

इस पर सत्यभामा रुक्मिणी से बोली— "दीदी, अब तुम और हमारे नाथ मेरी संपत्ति हैं। तुम दोनों को बेचने व दान करने के सारे अधिकार मेरे अधीन हैं।" यों परिहास करके सत्यभामा ने रुक्मिणी के आंचल को अपने हाथ में ले लिया ।

उस समय श्री कृष्ण ने सोचने का कोई बहाना करते हुए "अक्षय" कह दिया ।

किसी की समझ में न आया कि श्री कृष्ण के मुँह से ये शब्द क्यों निकले। उन सब के चेहरे पीले पड़ गए ।

उसी समय हस्तिनापुर में कौरवों की सभा में दुश्शासन द्रौपदी की साड़ी का आंचल खींच रहा था। तब असहाया द्रौपदी अपनी साड़ी के कोर को छोड़कर हाथ जोड़ करके श्री कृष्ण का स्मरण करते हुए "श्री कृष्ण" पुकार उठी ।

उस सभा में भीमसेन ने यह प्रण किया कि इस के बदले में वह दुश्शासन की छाती फाड़ कर उस का खून पीयेगा और दुर्योधन की जांध तोड़ डालेगा ।

दुश्शासन ज्यों-ज्यों द्रौपदी की साड़ी खींचता गया, त्यों त्यों द्रौपदी के कंधे पर से आंचल अक्षय रूप में बढ़ता रहा । देखते-देखते साड़ियों का ढेर लग गया और पसीने से तर-बतर होकर दुश्शासन निढाल हो नीचे गिर पड़ा ।

द्रौपदी मयसभा में दुर्योधन के भ्रम को देखकर हंस पड़ी थी। तभी दुर्योधन ने द्रौपदी का चीर हरण करके इसका प्रतिकार लेने का निश्चय कर लिया था। वह अब अपना सर झुकाए कर्ण, शकुनि व दुश्शासन के साथ सभाभवन से बाहर निकल गया ।

दुर्योधन, शकुनि, कर्ण और दुश्शासन ये चारों दुष्ट-चतुष्टय नाम से विख्यात थे ।

क्रोध, लोभ, मद, ईर्ष्या इत्यादि गुणों तथा अधर्म के मूल कलि पुरुष ने दुर्योधन के रूप में जन्मधारण किया था ।

नर-नारायण को पीठ दिखाकर भागने वाला सहस्त्र कवच एक कवच के साथ बचकर भाग गया और सूर्य के भीतर छिप गया था।

वह बाद को अविवाहिता कुन्ती के गर्भ से सूर्य के वरदान के कारण कर्ण के रूप में पैदा हुआ।

कुन्ती जब राजा पांडु की पत्नी बनी, तब नर-नारायण में से नर कुन्ती के गर्भ से अर्जुन के रूप में पैदा हुआ।

नारायण साक्षात् श्रीकृष्ण ही थे। कृष्ण और अर्जुन मानवीय रिश्ते में साले और बहनोई थे।

दुर्योधन का दृढ़-विश्वास था कि कर्ण जैसे महान धनुर्धारी जब उसके पक्ष में है तब पांडवों को बड़ी आसानी से हराया जा सकता है।

कुन्ती ने कर्ण को नदी में छोड़ दिया था। वह बालक सूत की पत्नी राधा को प्राप्त हुआ। उसने कर्ण को पाल-पोस कर बड़ा किया।

इसी कारण से कर्ण 'सूत पुत्र' और 'राधेय' कहलाया। दुर्योधन ने कर्ण को अंगदेश का राजा घोषित किया। इस से उस का आत्म विश्वास और प्रबल हो उठा।

कर्ण को अनेक शाप प्राप्त थे। इन्हीं कारणों से कर्ण ने ब्राह्मण के रूप में आए हुए इन्द्र को अपने जन्म से प्राप्त दिव्य कवच और कुण्डल दान कर दिए। फिर भी कर्ण अपनी शक्ति पर विश्वास रख कर दुर्योधन को प्रोत्साहन देता रहा।

कर्ण का उद्देश्य अपने प्रतिद्वंद्वी अर्जुन का युद्ध में संहार करना था। इसलिए वह दुर्योधन के पक्ष में चला गया।

पांडव वनवास करने चले गए। सत्यभामा ने श्री कृष्ण को जुए में जीतने के बाद उन को नारद के हाथ दान करके पुण्यक व्रत किया।

इस के बाद नारद ने बताया कि कृष्ण के वजन के बराबर स्वर्ण और रत्न लेकर वे उन को सत्यभामा को लौटायेंगे। सत्यभामा ने श्री कृष्ण का तुलादान करने के लिए अपने सारे स्वर्णाभूषण, रत्न तुला में डाल दिया। फिर भी वे सब कृष्ण के बराबर न हुए। ऐसी हालत में रुक्मिणी ने दूसरे पलड़े में भक्तिपूर्वक तुलसी दल डालकर श्री कृष्ण को नारद के हाथों से मुक्त किया।

इस पर सत्यमामा ने रुक्मिणी से कहा—"दीदी, मैं इस वक्त तुम्हारी दासी हूँ। श्री कृष्ण भक्ति के अधीन रहते हैं, इस सत्य का मुझे ज्ञानोदय कराया तुमने।"

पांडवों ने द्रौपदी के साथ मत्स्य देश में राजा

विराट के यहाँ अज्ञात वास किया ।

भीमसेन ने वहाँ वलल नाम से रसोइया का काम लिया। सैरंध्री के रूप में द्रौपदी दासी का काम करने लगी । भीम ने एक दिन उसका अपमान करने वाले कीचक का संहार कर दिया। इस प्रकार समान शक्तिशाली पांच लोगों में से तीन व्यक्ति भीमसेन के हाथों काम आए। अब केवल दुर्योधन बच रहा था ।

बृहन्नला के रूप में अर्जुन ने राजकुमारी उत्तरा को नृत्य सिखाया । उत्तर गोग्रहण के समय अर्जुन अपने असली रूप में प्रकट हुए और असंख्य महारथियों को बुरी तरह से पराजित किया ।

श्री कृष्ण के हाथों जब कंस का संहार हुआ, तब कालनेमि ने कंस के शरीर को त्याग कर श्री कृष्ण के भान्जे अभिमन्यु के रूप में जन्म लिया ।

कालनेमि श्री कृष्ण का चिरकाल का शत्रु था, फिर भी उसने कृष्ण के भान्जे के रूप में जन्म धारण किया था। इसलिए उनका संकल्प था, कि अभिमन्यु युवा वीरों के लिए ध्रुवतारा बनकर शाश्वत यश प्राप्त करें ।

सुभद्रा जब गर्भवती थी, तब एक दिन अर्जुन उसे युद्ध क्षेत्र में पद्मव्यूह को भेदने का रहस्य सुना रहे थे । उसी समय वहाँ पर श्री कृष्ण आ पहुँचे और बोले— "अर्जुन, मेरी बहन सुभद्रा का मन अत्यन्त कोमल है । इस को तुम युद्ध के समाचार क्यों सुना रहे हो ?" यों कह कर किसी बहाने वे अर्जुन को अपने साथ ले गये ।

सुभद्रा के गर्भ में शिशु अभिमन्यु ने पद्मव्यूह को भेदने का रहस्य आधा ही सुना । वह पद्मव्यूह के अन्दर प्रवेश करने का रहस्य तो जान गया, पर उसे भेद करके बाहर निकलने का रहस्य नहीं मालूम कर सका ।

यौवन के आवेश में अभिमन्यु डींग हांक रहा था— "मामाजी श्री कृष्ण भले ही इस वक्त यहाँ पर न हों, फिर भी यह राज्य हमारा हो कर रहेगा। उन कौरवों का संहार करने के लिए मैं अकेला ही पर्याप्त हूँ।" उसी समय श्री कृष्ण वहाँ पर पहुँचे और अभिमन्यु के कंधे पर थपकी देकर बोले— "अभिमन्यु, तुम सर्वदा इस योग्य हो । तुम जैसे वीर का यश शाश्वत

होकर रहेगा। मैं इस बात का गर्व कर सकता हूँ कि तुम्हारी वीरमाता सुभद्रा मेरी बहन है।''

सुभद्रा एवं अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु का विवाह उत्तरा के साथ संपन्न हुआ। पांडवों के वनवास के समय सुभद्रा और अभिमन्यु द्वारका में ही रहे। बलराम ने अपनी पुत्री शशिरेखा का विवाह दुर्योधन के पुत्र लक्ष्मण कुमार के साथ करने का निश्चय किया। अभिमन्यु के साथ उत्तरा का विवाह करना उन्हें कतई पसंद न था।

अभिमन्यु अपनी माता के साथ द्वारका से निकलकर अरण्यमार्ग से कहीं जा रहा था। उस वक्त भीमसेन और हिडिंबा पुत्र घटोत्कच से उनकी मुलाक़ात हो गई। घटोत्कच ने अपनी राक्षसी माया से माया बाज़ार की सृष्टि करके विवाह में आए हुए वर पक्ष वालों को खूब तंग किया। इसके बाद शशिरेखा को उठा ले जाकर अभिमन्यु के साथ उस का विवाह संपन्न किया।

अज्ञातवास सफलतापूर्वक बिताने के बाद कौरवों का अन्त करने के लिए पांडव तथा पांडवों को निर्मूल करने के लिए दुर्योधन बेचैन हो उठे।

एक दिन एक ओर से दुर्योधन तथा दूसरी तरफ़ से अर्जुन श्री कृष्ण की मदद पाने के लिए द्वारका पहुँचे।

निद्रा से जागकर श्री कृष्ण ने अपने चरणों के समीप बैठे अर्जुन को देखा। फिर अपने सिरहाने एक आसन पर बैठे हुए दुर्योधन की ओर दृष्टि घुमाई।

श्री कृष्ण ने उन दोनों के सामने यह शर्त

रखी— ''मैं युद्ध क्षेत्र में अस्त्र-शस्त्र धारण नहीं करूँगा, मैं अकेला तुम दोनों में से किसी एक पक्ष में रहूँगा तो दूसरे पक्ष में सारी यादव-सेना रहेगी। तुम दोनों इन दोनों में से एक का चुनाव कर लो। पर मैंने पहले अर्जुन को देखा है, इसलिए चुनाव का पहला अधिकार इसी को है।''

इस पर अर्जुन ने श्री कृष्ण का चुनाव किया। सारी यादव सेना दुर्योधन के पक्ष में रहकर पांडवों से युद्ध करेगी। यह अवसर पाकर दुर्योधन बड़ी खुशी के साथ वहाँ से वापस लौटा।

धृतराष्ट्र के आदेश पर संजय दूत बनकर पांडवों के पास आए और उन्हें शांति का संदेश

सुनाया कि युद्ध करना किसी भी दृष्टि से हितकर नहीं है ।

पांडवों ने श्री कृष्ण को दूत बना कर कौरवों के पास भेजा । उन्होंने कौरवों को समझाया कि यदि वे लोग पांडवों को आधा राज्य भी न दें तो कम से कम इन्द्रप्रस्थ आदि पांच गाँव ही दे दें । उन्होंने यह भी बताया कि मैं शांति की कामना से दोनों पक्षों के बीच संधि करने के विचार से आया हूँ । हर दृष्टि से युद्ध दोनों ही पक्षों के लिए अनुचित और विनाशकारी है ।

पर दुर्योधन ने श्री कृष्ण की बातों पर बिल्कुल ध्यान न दिया, बल्कि उस ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि पांडवों को सुई की नोक के बराबर भी जमीन नहीं दी जाएगी ।

इस पर श्री कृष्ण ने कौरव सभा को लक्ष्य करके गंभीर वाणी में कहा— "मैं अर्जुन के रथ का सारथ्य करूँगा । उस के रथ पर हनुमान चित्रांकित पताका लहराती रहेगी । उस वक्त रथ पर अर्जुन गांडीव धारण करके तुम लोगों की सेनाओं को गाजर-मूली की तरह काटेगा । तब चाहे तुम्हारे दल में दस हजार कर्ण भी क्यों न हों, एक भी बच कर युद्ध भूमि से बाहर नहीं निकल सकेगा । उस वक्त तुम्हारी प्रार्थना सुनने वाला भी कोई न रहेगा । मेरी बातों पर विश्वास करो ।"

श्री कृष्ण के मुँह से ये वचन सुन कर दुर्योधन क्रोधावेश में आकर बोला— "हे कृष्ण, तुम दूत बन कर आए हो या पांडवों की वीरता की डींग हाँककर हमें धमकी देने आये हो । अभी मैं तुम्हें रस्सों से बंधवा देता हूँ और देखता हूँ कि कौन आकर तुम्हें बचा सकता है ?" यों कहकर उसी वक्त दुश्शासन के द्वारा दुर्योधन ने इस्पात से निर्मित रस्सा मंगवाया । इसे देख कृष्ण के साथ आए हुए सात्यकी ने अपनी म्यान से तलवार खींच ली ।

श्री कृष्ण ने सात्यकी को रोकते हुए कहा— "खाली हाथ समझौता करने के लिए मैं दूत बन कर आया हूँ । क्या मुझे बन्दी बनाना उचित है ? तुम्हारा दल-बल बहुत ही प्रभावशाली है, मैं अकेले क्या कर सकूँगा ? मेरी भूल थी कि मैं यहाँ की हालत के बारे में बगैर सोचे-समझे चला आया । अब यदि तुम बन्दी बना सकते हो तो बना लो ।"
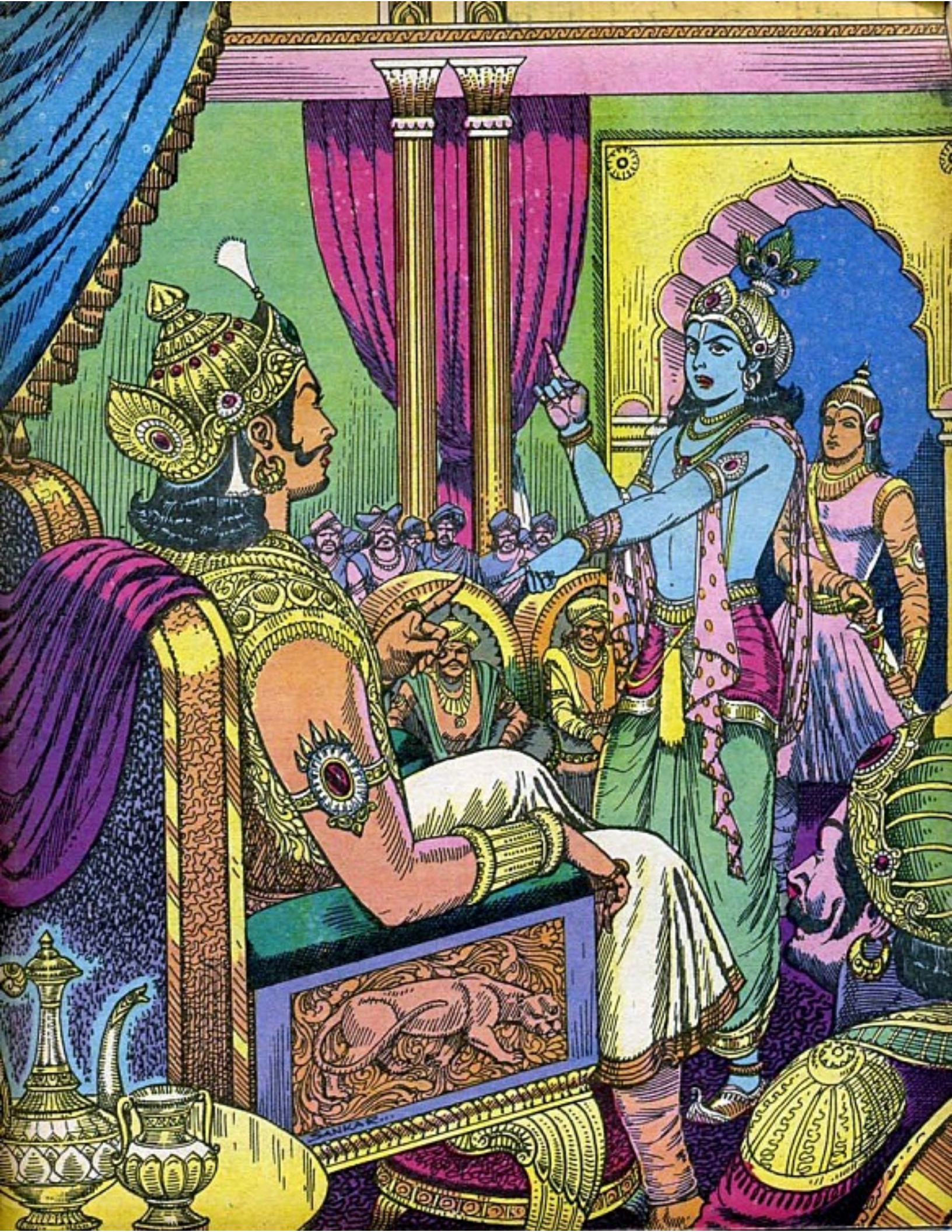
इसके बाद दुष्ट-चतुष्टय ने श्री कृष्ण को घेर कर बन्दी बनाना चाहा । परन्तु श्री कृष्ण ने अपनी महिमा से विश्वरूप धारण कर लिया । उस रूप को देख दुर्योधन आदि भय-विह्वल हो वहाँ से भाग गए ।

साम-दाम उपायों के द्वारा श्री कृष्ण ने पांडव और कौरवों के बीच संधि करने का जो प्रयत्न किया वह इस प्रकार असफल हो गया । अब युद्ध अनिवार्य था ।

कुरुक्षेत्र में अनेक देशों के राजा अपनी असंख्य अक्षौहिणी सेनाओं के साथ जमा हुए । इस प्रकार उभय पक्षों के बीच महा-भारत युद्ध के लिए क्षेत्र तैयार हो गया । रथों के घण्टों के निनादों, और अश्व घोषों के साथ दिशाओं को प्रति ध्वनित करते हुए युद्ध की भेरियाँ बज उठीं । जिस स्थान पर एक समय परशुराम ने क्षत्रियों के रक्त से शमंत पंचक नामक पांच तालाबों को भर दिया था, वही कुरुक्षेत्र अब फिर क्षत्रियों की बलि मांग रहा था ।

संजय को दिव्य दृष्टि प्राप्त थी । इसलिए उसने धृतराष्ट्र के मनो नेत्रों के सामने कुरुक्षेत्र का सजीव चित्र खींच कर रख दिया । जन्मांध तथा पुत्र-प्रेम के वशीभूत कौरव चक्रवर्ती धृतराष्ट्र जो अपने पुत्र को युद्ध से रोकने में असमर्थ थे, चुपचाप संजय की बातें सुनते जा रहे थे । अपने पति को अंधे पाकर अपनी आँखों पर पट्टी बाँधनेवाली महा पतिव्रता गांधारी भी, जो सौ कौरवों की माता थी, धृतराष्ट्र की बगल में बैठी सारा वृतांत सुन रही थी ।

संजय युद्ध क्षेत्र का वर्णन करते जा रहे थे और वे दोनों पति-पत्नी चुपचाप ध्यान से सुनते जा रहे थे । संजय ने पांडव और कौरव दलों की सेना का वर्णन सुनाया । धृतराष्ट्र ने पूछा— "संजय, बताओ, उन दोनों दलों के बीच अंतर क्या है ?"

संजय ने कहा— "पांडव और कौरव सेना-दल वैसे समान रूप से शक्तिशाली हैं, पर श्री कृष्ण को पाकर पांडव दल अधिक शक्ति संपन्न हो गया है ।" यों कह कर वह कुरुक्षेत्र के युद्ध के समाचार विस्तारपूर्वक सुनाने लगे ।

विचित्र विवाह

पुराने जमाने की बात है। यरवान नगर पर अब्दुल नयाज नामक नवाब राज्य करते थे। उनकी बेटी उनकी एक मात्र सन्तान थी। इसलिए नवाब ने उसे बचपन से ही अभ्यास कराकर सभी विद्याओं में प्रवीण बना दिया।

नवाब की बेटी जब युक्त वयस्का हो गई तब वह उसकी शादी करने की चिंता और प्रयत्न करने लगे। यह समाचार सुन कर शाहजादी ने अपने पिता से कहा— "बाबूजी, आप किसी युवक को केवल किसी राज्य का शाहजादा मात्र समझकर मेरे गले में उसे मढ़ने की कोशिश मत कीजिएगा। मैं ऐसे युवक के साथ शादी करना चाहती हूँ जो मेरे समान ही युद्ध विद्याओं में प्रवीण हो, बल्कि मुझ से कहीं बढ़ चढ़ कर हो।"

"ऐसे युवक की मैं खोज कैसे कर सकता हूँ ?" नवाब ने चिंतित हो कर कहा।

"यह तो बहुत ही सरल है। आप इस आशय का ढिंढोरा पिटवा दीजिए कि जो युवक घुड़ सवारी, खड्ग युद्ध जैसी विद्याओं की प्रतियोगिता में भाग लेकर शाहजादी को पराजित करेगा, उसी के साथ शाहजादी शादी करेगी।" नवाब की बेटी ने अपने पिता को उपाय बताया।

नवाब पल दो पल सोचकर बोले— "इस प्रकार का ढिंढोरा पिटवाना बड़ा आसान है। लेकिन जानती हो, इसका नतीजा क्या होगा ? हर कोई अपनी क़िस्मत आजमाने के ख्याल से तुम्हारे साथ प्रतियोगिता में भाग ले सकता है। इसे हम कैसे रोक सकते हैं ?"

"यह बात मैं ने पहले ही सोच रखी है। मेरे साथ होड़ लगा कर जो युवक हार जायेंगे, उनके घोड़े व हथियार मेरे अधीन हो जायेंगे और उन्हें अपनी पीठ पर मेरा नाम चिन्हांकित करवाना होगा।" नवाब की बेटी ने उपाय बताया।

इस पर नवाब ने अपनी बेटी के सुझाव के

(अरब्य रजनी की कहानी)

अनुसार ढिंढोरा पिटवा दिया ।

एक हफ़्ते के अन्दर आस-पास के राज्यों के राजकुमार यरवान नगर पहुँचे और नवाब की बेटी के साथ घुड़-सवारी, बाण-विद्या, खड्ग विद्या आदि प्रतियोगिताओं में होड़ करके शाहजादी के हाथों बुरी तरह से हार गए। नवाब की बेटी ने उनके घोड़े व हथियारों पर क़ब्जा कर लिया और उन की पीठों पर अपना नाम अंकित करवा दिया ।

एक दिन फारस का राजकुमार यरवान नगर पहुँचा और नवाब से मुलाक़ात की। नवाब ने उसका यथोचित आदर-सत्कार करके अन्त में कहा— "तुम एक बहुत बड़े राज्य के भावी राजा हो, मेरी बेटी की शर्तों से तुम परिचित हो। मैं यह नहीं चाहता कि तुम पराजित हो कर अपमान का अनुभव करो । तुम अपना यह विचार त्याग कर जब तक चाहो मेहमान बनकर रहो। लेकिन विवाह की प्रतियोगिता में शामिल न हो ।"

"इतनी दूर आकर युद्ध-विद्याओं में तुम्हारी बेटी से होड़ न करके वापस लौट जाना हार जाने से भी ज़्यादा अपमान की बात होगी।" फारस के राजकुमार ने कहा ।

नवाब ने अनिच्छा पूर्वक फारस के राजकुमार तथा अपनी बेटी के बीच प्रतियोगिता का प्रबन्ध कर दिया। दोनों ने घोड़ों पर सवार होकर खड्ग युद्ध प्रारंभ किया। थोड़ी ही देर में नवाब की बेटी ने अनुभव किया कि इस बार वह अपने से कहीं ज़्यादा कुशल व्यक्ति के साथ युद्ध कर रही है। उसने यह बात भांप ली कि फारस के युवराज को जब यह मौक़ा मिला कि शाहजादी की तलवार को उड़ाकर उसे घोड़े पर से नीचे गिरा दे, फिर भी उसने ऐसा नहीं किया। इससे स्पष्ट है कि वह शाहज़ादी के प्रति आदर का भाव रखता है ।

पर नवाब की बेटी को अधिक संख्या में उपस्थित प्रेक्षकों के समक्ष अपनी पराजय को स्वीकार करना आत्म-सम्मान के लिए धक्के की बात महसूस हुई । उसने एक उपाय सोचा । उसने अचानक अपने नक़ाब को थोड़ा सा हटाकर फारस के राजकुमार की ओर देख मुस्कुरा दिया ।

शाहजादी के अद्भुत सौन्दर्य को देख राजकुमार पल भर के लिए स्तंभित रह गया। उस वक्त राजकुमार को थोड़ा असावधान पाकर शाहजादी ने उसके हाथ की तलवार को चट से उड़ा दिया और उसे घोड़े पर से नीचे खींच दिया ।

फारस का राजकुमार अपमान और क्रोध से जैसे ही उठने को हुआ कि चार नीग्रो गुलामों ने उसकी बाहों को ऐंठ कर पकड़ लिया और उसकी पीठ पर शाहजादी का नाम अंकित कर दिया ।

असह्य क्रोध के आवेश में राजकुमार वहाँ से तुरन्त चला गया। उसके मन में नवाब की बेटी के साथ प्रतिकार करने की भावना प्रबल हो उठी ।

एक महीने के बाद शाहजादी जब नवाब के उद्यान में अपनी सहेलियों के साथ टहल रही थी, तब उसे एक बूढ़ा आदमी दिखाई दिया। उसके आगे एक कालीन बिछा हुआ था और उस पर अत्यंत क़ीमती रत्न और सोने के आभूषण रखे हुए थे ।

नवाब की बेटी ने उन अमूल्य रत्नों को देख उसके समीप जाकर पूछा— "क्या तुम ये सब रत्नाभूषण बेचने के लिये लाये हो ?"

"ये सब बेचने के लिए नहीं, जो युवती मेरे साथ विवाह करेगी उसको भेंट में देने के लिये लाया हूँ ।" बूढ़े ने जवाब दिया ।

यह जवाब सुनकर शाहजादी और उसकी सहेलियाँ खिल-खिलाकर हँस पड़ीं, फिर परिहास पूर्वक बोलीं— "इस वृद्धावस्था में भी तुम शादी करना चाहते हो ?"

"समझो, यह मेरी चपल बुद्धि है। मेरे साथ विवाह करने वाली युवती को हमेशा के लिए मेरी पत्नी बन कर रहने की जरूरत नहीं है। मेरे साथ पल दो पल उस वृक्ष की छाया में खड़े घोड़े पर वह बैठ जाये तो पर्याप्त है। इस के बाद समझ लो कि मेरी शादी उसके साथ रद्द हो गई है। बस उसे मैं ये क़ीमती उपहार दे दूँगा।" बूढ़े ने खिलखिला कर हँसते हुए बताया ।

नवाब की बेटी को यह जवाब बहुत विचित्र और आश्चर्यजनक लगा । उसने अपनी

चक्कर लगाया, तब घोड़े पर से उतर पड़ा। काजी ने उनकी शादी रद्द होने की सूचना दी। शाहजादी की सहेली ने बूढ़े से रत्न और आभूषण ले लिये।

इस प्रकार चार दिनों में बूढ़े ने शाहजादी की सभी सहेलियों से एक-एक करके शादी कर ली, और थोड़ी देर बाद काजी के द्वारा उन शादियों को रद्द करवा कर उन्हें ढेर सारे रत्नाभूषण दे दिये।

पांचवें दिन नवाब की बेटी जान बूझ कर अकेली ही उद्यान में गई। उस समय वहाँ पर बूढ़ा अपने आगे बिछाये गये कालीन की ओर एक टक देखते हुए अपने आप कुछ बुदबुदा रहा था।

"आज न मालूम कौन भाग्य-शालिनी मेरी पत्नी बनेगी। हर रोज से कहीं अधिक आज लाखों अशर्फ़ियों के मूल्य का, यह रत्नहार मैं उसे देने जा रहा हूँ।"

सचमुच उस दिन बूढ़े के कालीन पर चकाचौंध करने वाला एक बहुत बड़ा रत्नहार था। नवाब की बेटी उसे देख मन ही मन मुग्ध हो उठी। वह अपने मन पर आज क़ाबू न रख सकी, फिर वह बूढ़े की ओर देखकर बोली— "मैं थोड़े क्षणों के लिए तुम्हारी पत्नी बनने को तैयार हूँ।"

काजी ने उन दोनों की शादी कर दी। बूढ़ा नवाब की बेटी के साथ घोड़े पर सवार हुआ। उसने वृक्ष के चारों तरफ़ एक बार चक्कर

सहेलियों से पूछा— "तुम में से कोई यह झूठ-मूठ की शादी करने के लिए तैयार है ?"

सभी सहेलियों ने तुरन्त अपनी स्वीकृति दे दी। कुछ ही क्षणों में प्राप्त होने वाली अपार संपत्ति को देख उन के मन में लालच पैदा हो गया।

नवाब की बेटी ने बूढ़े से शादी के लिए अपनी सहेलियों में से एक का चुनाव किया। बूढ़े ने तालियाँ बजाकर इशारा किया। इस पर दूर एक पेड़ के नीचे बैठा हुआ एक काजी आ गया और शाहजादी की एक सहेली के साथ बूढ़े की शादी कर दी।

बूढ़ा उस युवती को घोड़े के पास ले गया। उसको घोड़े पर बिठा कर पेड़ के चारों तरफ़ दो

लगाया, और घोड़े को जोर से हांक दिया। घोड़ा तेज गति से दौड़ने लगा। नवाब की बेटी किसी खतरे की आशंका से चिल्लाने लगी। लेकिन तभी बूढ़े ने उस के मुँह पर हाथ रख कर जोर से दबा दिया। नवाब की बेटी डर के मारे बेहोश हो गई।

थोड़ी देर बाद जब वह फिर होश में आ गई तब बूढ़े ने उस की ओर एक टक देखते हुए कहा— "मैं शास्त्र विधि के साथ तुम्हारे साथ शादी करनेवाला पति हूँ।"

"यह बात सही है। पर इस शादी को रद्द करने वाला काजी कहाँ है?" डर के मारे चारों ओर नज़र दौड़ा कर नवाब की बेटी ने पूछा।

बूढ़ा खिलखिला कर हँस पड़ा और उसने अपनी नकली दाढ़ी व मूँछें निकाल कर दूर फेंक दीं। तुरन्त शाहजादी ने पहचान लिया कि वह और कोई नहीं, बल्कि उसके हाथों अपमानित हुआ फारस का राजकुमार है।

"तुमने मेरे साथ धोखे से शादी की है।" शाहजादी ने क्रोधित हो कर कहा।

"तुमने मुझ को धोखे से हराया। ऐसी हालत में मैं भी तुम्हारे साथ धोखे से शादी कर लूँ, तो इसमें गलती क्या है?" फारस के राजकुमार ने कहा।

नवाब की बेटी ने लज्जा के मारे अपना चेहरा झुका लिया।

फारस के राजकुमार ने समझ लिया कि नवाब की बेटी उसकी पत्नी बनने में खुशी का अनुभव कर रही है, तब बोला— "तुम ने मेरी पीठ पर अपना नाम इस प्रकार अंकित करवाया जो कभी नहीं मिट सकता। लेकिन यह तो अनावश्यक था, तुम्हारा नाम व रूप मेरे दिल पर बहुत पहले से ही अंकित हैं।"

इस पर शाहजादी और भी ज्यादा लज्जित हो गई।

इस के बाद उन दोनों ने एक दूत के द्वारा नवाब के पास एक चिट्ठी भेज दी। वे अपनी पुत्री के विचित्र विवाह पर ठहाके मार कर हँस पड़े। उसके बाद राजमहल में वैभवपूर्वक उन दोनों का विवाह कर दिया गया।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां सितम्बर १९८४ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

S. G. Seshagiri

V. Muthuraman

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ जुलाई १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

मई के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **धर्म का रास्ता!**

द्वितीय फोटो : **कर्म में आस्था!!**

प्रेषक : सुरेशचन्द्र गुप्ता, ४४, गौशाला मार्ग, अशोक नगर, जिला : गुना (म. प्र.)

क्या आप जानते हैं ? के उत्तर

१. सर अलेक्साण्डर ग्राहमबेल २. गेलिलियो ३. थामस अलवा एडिशन
४. राइस केल्लाग ५. डॉक्टर विलियम स्टोक्स

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

Campa
Campa
Campa
कैम्पा के संग संग
लेते मज़ा हम!
कैम्पा आरेंज फ्लेवर - मौजमस्ती का स्वाद!
OBM/5361
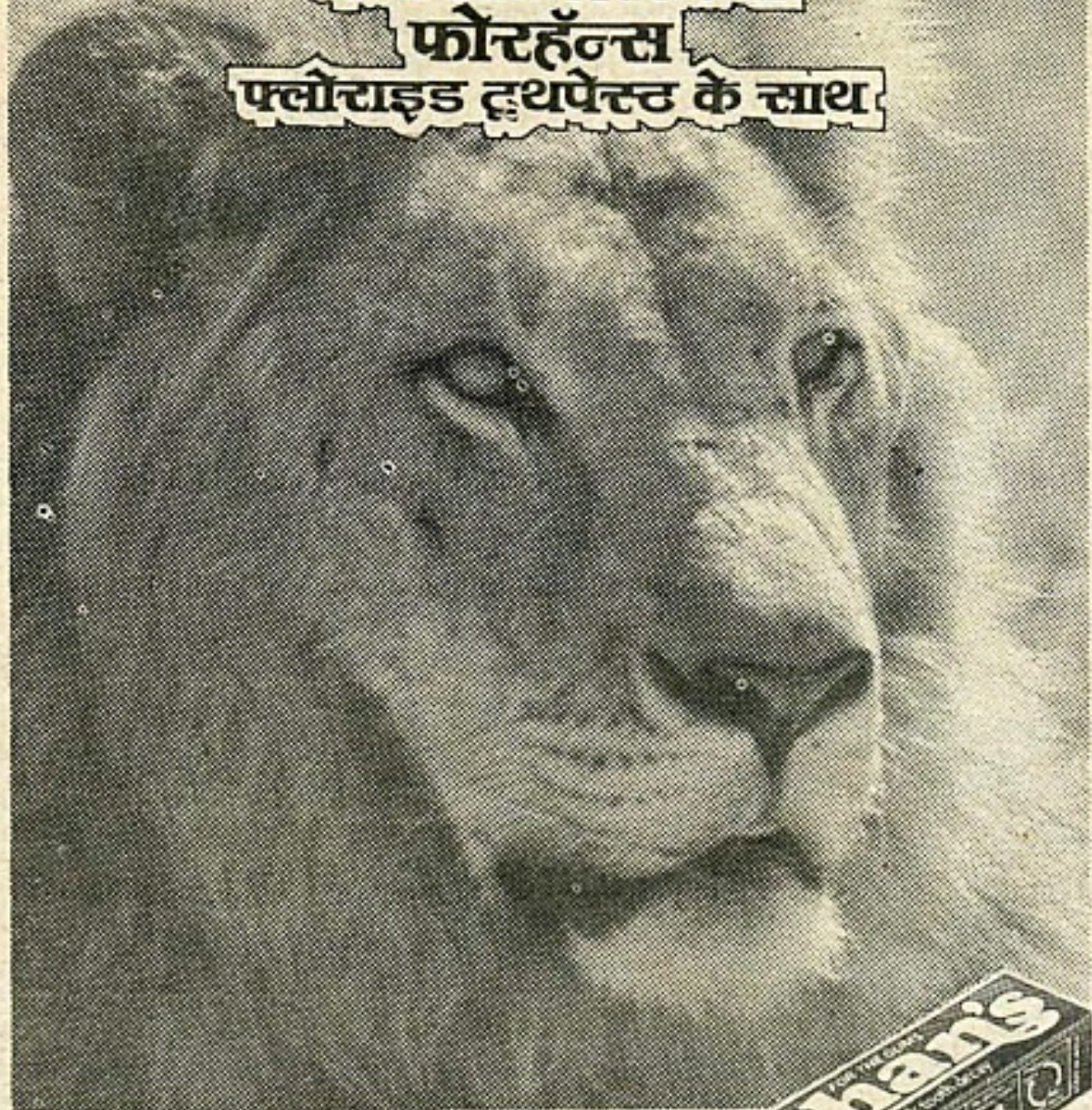
Pic. E. Hanumantha Rao.
Courtesy: World Wildlife Fund-India Photo Library.

LIKE TO FLY INTO THE EXCITING WORLD OF ADVENTURE AND HUMOUR?
DOLTON
SUPER COMICS
CAN TAKE YOU THERE
EVERY FORTNIGHT!
IT COSTS ONLY Rs. 2.50 A COPY-
EVIDENTLY THE MOST EASILY
AVAILABLE COMICS MAGAZINE
YOU'VE EVER READ:
ITS 36 FULL COLOUR PAGES TAKE YOU
THROUGH MYSTERY AND EXCITEMENT TO A
RENDEZVOUS WITH THE SUPER HEROES–
SUPERMAN
&
BATMAN
DOLTON COMICS
DC
DOLTON PUBLICATIONS
MADRAS 600 026

पारले
नमकीन और मीठा-एक मिलन अनोखा.
कोई कहे मीठे हैं,
कोई कहे नमकीन,
क्रैकजैक के स्वाद में,
खो जायें सब लेकिन.
PARLE Krackjack BISCUITS
सिर्फ यही पैक खरीदिये,
क्योंकि असली क्रैकजैक खुले
कभी नहीं बिकते, कभी नहीं.
बम्बई पारितोषिक
विजेता.
पारले क्रैकजैक बिस्किट
—जिसका मीठा नमकीन स्वाद सबको ललचाये.